आँगन के गुलाब

आँगन के गुलाब

(बाल-उपन्यास)

चन्द्रदत्त 'इन्दु'

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

अगस्त 2000
भाद्रपद 1922

PD 2T MK

प्रकाशन सहयोग

मीरा कांत *संपादक* शिवकुमार *मुख्य उत्पादन अधिकारी*
प्रमोद रावत *स.उत्पादन अधिकारी* डी साई प्रसाद *उत्पादन अधिकारी*

एन.सी.ई.आर.टी. के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैम्पस	108, 100 फीट रोड, होस्डेकेरे	नवजीवन ट्रस्ट भवन	सी.डब्ल्यू.सी. कैम्पस
श्री अरविंद मार्ग	हेली एक्सटेंशन, बनाशंकरी III इस्टेज	डाकघर नवजीवन	32, बी.टी. रोड, सुखचर
नई दिल्ली 110016	बैंगलूर 560085	अहमदाबाद 380014	24 परगना 743179

मूल्य : रु 52.00

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् श्री अरविंद मार्ग, नई दिल्ली 110016 द्वारा प्रकाशित तथा नाथ ग्राफिक्स, 1/21, सर्वप्रिय विहार, नई दिल्ली 110016 द्वारा लेज़र टाइप सैट होकर अरावली प्रिन्टर्स एण्ड पब्लिसशर्स (प्रा) लिमिटेड, डब्ल्यू 30, ओखला फेस–II नई दिल्ली–110020 द्वारा मुद्रित।

प्राक्कथन

बच्चों के व्यक्तित्व विकास में पुस्तक की अपनी एक विशेष भूमिका है। राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् (एन.सी.ई.आर.टी.) का ध्येय है बच्चों को ज्ञानवर्द्धक व सुरुचिपूर्ण पुस्तकें देना। इस नाते परिषद् विषयों का इतना विस्तृत फलक प्रस्तुत करती है कि विभिन्न आयु वर्ग के बच्चे ज्ञान व आनंद के लिए अपनी रुचि के अनुरूप पुस्तकें चुनकर पढ सकें। ये पुस्तकें श्रेष्ठ लेखकों की कृतियॉ होती हैं। इन पुस्तकों को विशेष तौर पर ऐसा स्वरूप प्रदान किया जाता है कि वे बच्चों को पढ़ने का आनद दे सकें और उनकी अध्ययन क्षमताओं को बेहतर बना सकें। साथ ही बच्चों में यह जागरूकता आ सके कि वे पुस्तकों को एक जीवनपर्यत साथी के रूप में देखें और ये पुस्तकें नए विचारों व अंतर्दृष्टि के स्रोत के रूप में बाल व किशोर पाठकों को सम्मोहित कर सकें।

अपने आसपास व भीतर की दुनिया को जानने का सबसे सरल व छोटा रास्ता है—पुस्तके। पुस्तकें, जो कथा साहित्य के साथ-साथ मिथकों, लोक कथाओं, दंत कथाओं, जीवन चरितों, पर्यावरण, प्रकृति, संस्कृति, इतिहास आदि विविध विषयों व विधाओं का सागर समेटे होती हैं। परिषद् के तत्वावधान में प्रकाशित पुस्तकों के लिए ऐसे विषयों का चुनाव किया जाता है जो पाठकों की जिज्ञासा-प्रवृत्ति को प्रखर बनाए और उन्हें एक अन्वेषी मन दे सके।

परिषद् की 'पढ़ें और सीखें' परियोजना के अंतर्गत अब तक हिंदी व अंग्रेज़ी की अनेक पुस्तकों का प्रकाशन किया जा चुका है। वर्तमान पुस्तक 'ऑगन के गुलाब' इस शृंखला की एक अगली कड़ी है। लेखक ने इस बाल-उपन्यास को सार्थक जीवन-मूल्यों के ताने-बाने से बुना है।

कहानी में विभिन्न घटनाओं, स्थितियों, पात्रों और परिवेश के माध्यम से साहस, सहयोग, सहकारिता, समस्या-समाधान, कर्मठता, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, लोक कल्याण जैसे वांछित मूल्यों की स्थापना की गई है। प्रकृति का सान्निध्य यात्रा को सम्मोहक बना देता है और उससे प्राप्त अनुभव अपने रोमांच को समेटे अर्से तक भीतर कहीं साँस लेते रहते हैं। 'आँगन के गुलाब' का पाठक भी संभवतः यही स्पंदन भीतर महसूस करेगा।

मैं लेखक श्री चन्द्रदत्त 'इन्दु' का आभारी हूँ कि उन्होंने प्रेरणादायी मूल्यों को ध्यान में रखते हुए एक सरोकार के साथ इस बाल-उपन्यास की रचना की। इस पुस्तक के प्रकाशन के कार्य को शीघ्रतापूर्ण करने में श्री नासिरुद्दीन खान तथा डा. मीरा कांत ने प्रशंसनीय तत्परता दिखाई है।

आशा है कि यह पुस्तक बच्चों को आनंददायक लगेगी तथा उनमें और अधिक पढ़ने की ललक जगा सकेगी।

जगमोहन सिंह राजपूत
निदेशक
राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्

मेरी बात

हिमालय भारत की सांस्कृतिक परम्परा और मानवीय पुनरुत्थान के इतिहास की क्रीडास्थली है। इस उपन्यास – 'आँगन के गुलाब' का आरंभ हिमालय दर्शन की यात्रा से शुरू होता है। यात्राएँ जीवन को चेतनामयी प्रबुद्धता से जोड़ती हैं, हमें इतिहास, भूगोल और सभ्यता के प्रकाश का दिग्दर्शन कराती है और हमारे मन में उमड़ते अनेकानेक प्रश्नों का उत्तर भी देती हैं। रहस्य-रोमांच से भरी इस यात्रा के अनेक यात्रियों में दो बच्चे भी हैं। वे बच्चे ही इस उपन्यास के ऐसे दो नन्हे पात्र हैं, जिनकी क्रियाशीलता के आसपास इस उपन्यास की घटनाओं को गुम्फित किया गया है। ये घटनाएँ शुरू कहीं से भी हों, किन्तु हर घटना मानवीय संवेदना, भाईचारे, एकता और सह-अस्तित्व के उस छोर से जुड़ी है, जो राष्ट्रीय एकता के बोध को मुखरित करता है।

कर्त्तव्य की निष्ठा से भरा हमारा हर कर्म देश के आँगन में उसी तरह अपनी सुगंध फैलाता है, जिस तरह बगिया में महकते गुलाब। हमारे नन्हे साहसी नायकों ने भी इस औपन्यासिक घटना-क्रम में कुछ ऐसा ही किया है, जिसकी गंधाती प्रेरणा की महक पाठकों के मन में रच-बस जाएगी। बच्चे इसे पढ़कर निश्चय ही कुछ जान और सीख पाएँगे। साथ ही उनका कर्त्तव्यबोध जगेगा, इसी विश्वास के साथ मैं इस सृजन को अपने पाठकों को समर्पित करता हूँ।

चन्द्रदत्त 'इन्दु'

एक

केदार-बदरी के कपाट खुल चुके थे। हरिद्वार से ही यात्रियों का ताँता लग गया था। ऋषिकेश में बसों, टैक्सियों और कारों की एक लम्बी कतार थी। इसी कतार में दिल्ली की एक बस भी खड़ी हुई थी। इस बस में अन्य यात्रियों के अलावा आगे की सीटों पर एक पत्रकार नगेन्द्र शर्मा, उनकी पत्नी सुधा और पीछे की सीट पर दो बच्चे जिनकी आयु 10–11 वर्ष के बीच थी, बैठे थे। इनके नाम थे – आलोक और आदित्य। इससे पीछे की सीट पर जो दम्पति बैठे थे, वे थे – मुरारीलाल गुप्ता और उनकी पत्नी शोभा। ये दिल्ली के व्यापारी थे। शर्मा जी और गुप्ता जी दिल्ली में पड़ोसी थे और उनके दोनों बच्चे सहपाठी। दोनों परिवार साथ-साथ बदरीनाथ की यात्रा पर जा रहे थे। इनके सामने की दूसरी सीट पर बैठे थे पहाडी से दीखने वाले एक सज्जन। उनकी सफेद लम्बी दाढ़ी वृद्धावस्था का संकेत दे रही थी, किंतु देखने पर गौर वर्ण वाले यह सज्जन बूढ़े नहीं लग रहे थे। इनके चेहरे की लालिमा और सुगठित देह बता रही थी कि इन्होंने अभी 60 की देहली पार नहीं की है। इनका नाम था – दीनानाथ जोशी। इनके पास बैठे थे अधेड़ आयु के एक दूसरे सज्जन, जो माला जपने में व्यस्त थे।

यह बस सुबह के पाँच बजे ऋषिकेश से अपने गंतव्य के लिए रवाना हुई। दिन अभी पूरी तरह नहीं निकला था। पहाड़ों पर वृक्षों के गहन साए थे। नीचे से गुज़रती सडक पर धुंधलका अभी भी रात होने का आभास दे रहा था। आकाश में गहरे बादलों के दल इधर से उधर दौड़ लगा रहे थे। बस की गति धीमी थी। जंगल के बीच से गुज़रते हुए यात्री शीतल हवा के सुखद झोंकों

की थपकियों से नींद में झूलने लगे थे। इतनी सुबह यात्रा और वह भी इस पहाड़ी मार्ग पर, निरापद नहीं थी, किंतु बस का शाम ढलने तक जोशीमठ पहुँचना जरूरी था। इसलिए रास्ते के मोडों पर हार्न बजाता, बस की गति को नियंत्रण में रखता, ड्राइवर सावधानी से बस चला रहा था।

धीरे-धीरे आकाश पर सिंदूरी किरणों के रंग उभरने लगे। दिन का उजाला फूट चुका था। उजाले की भनक पाकर अंधेरा अपनी चादर समेटकर झाड़ियों के झुरमुट में छिपने की कोशिश कर रहा था। सड़क के साथ-साथ बहुत नीचे पत्थरों से टकराती, उछलती, निनाद करती गंगा की चंचल धारा वेगवान गति से बह रही थी। ऋषिकेश कब का पीछे छूट चुका था। आगे एक झरना था। कुछ बसें यहाँ रुकी थीं। यात्री उतरकर झरने का पानी पी रहे थे। किंतु यह बस वहाँ नहीं रुकी। लगभग एक घंटा और बीता। अब दिन कई बाँस ऊपर चढ़ गया था। पर्वत की चोटियों से फिसलती धूप घाटियों में अठखेलियाँ करने लगी थी।

अचानक आदित्य चिल्लाया – "पापा। उधर देखो, नीचे नदी की धार के पास वे दो काले जानवर कौन खड़े हैं? ये शेर हैं पापा ! या और कोई?"

बेटे की बात सुनकर शर्मा जी ने गौर से देखा, मगर वह भी जानवरों की सही पहचान न कर सके। बोले – "ये तो मुझे चीते जैसे लग रहे हैं।"

वे दोनों सड़क से काफी निचाई पर थे। और साथ ही थे गंगा के दूसरे किनारे पर, इसलिए गंगा की उछलती फेनिल जलधारा पार कर उनका बस के पास आना संभव नहीं था। सभी यात्री बस रुकवाकर उन्हें देखने लगे। मगर वह कौन-सा जानवर है, यह सही-सही कोई भी नहीं बता पा रहा था। तभी दीनानाथ जोशी ने उन जानवरो को देखा और बोले – "ये तेंदुए हैं। इस

जंगल में तेंदुए बहुत पाए जाते हैं। कभी-कभी शेर भी दिखाई देते हैं, मगर क़म। शेर की जाति का यह जानवर तेंदुआ अक्सर आते-जाते लोगों को दीख पडता है।"

"ये तो बड़े डरावने लग रहे हैं। खतरनाक भी होंगे दादा जी !" आदित्य बोला।

दादा संबोधन सुनकर जोशी जी ने प्यार से आदित्य के गालों को थपथपाया और कहा – "बड़े समझदार हो तुम। तुमने मुझको दादा ठीक ही कहा बेटा ! तुम्हारी उम्र का मेरा एक पोता है। तुम तेंदुओं को देखकर डरो नहीं। वैसे तो हर हिंसक जानवर खतरनाक होता है, मगर तेंदुआ अचानक हमला कभी नहीं करता। इसका आहार ज़्यादातर जंगल के पशु ही होते हैं। एक और खास बात बताता हूँ, तेंदुआ जब खाँसता है, तो ऐसा लगता है, कोई आदमी खाँस रहा हो। कभी-कभी इसकी खाँसी सुनकर आदमी धोखे में आ जाता है। यह असावधान आदमी पर हमला भी कर सकता है, इसलिए जंगल में सावधान होकर ही चलना चाहिए। यह कभी आदमखोर हो जाए, तो बच्चों को भी उठाकर ले जाता है।"

"दादा जी, आदमखोर क्या होता है?" इस बार आलोक ने उत्सुकता से जोशी जी की ओर देखा।

"बेटा, जिसे आदमी का खून मुँह लग जाए, वही आदमखोर कहलाता है। इन पहाड़ों के अंदर बहुत से जंगल हैं और उन जंगलों में बड़े-बड़े भयानक जानवर रहते हैं, मगर आदमी भी तो यहाँ रहते ही हैं।"

"दादा जी, आदमियों को इन हिंसक जानवरों से डर नहीं लगता क्या?" आदित्य ने पूछा।

"डरेंगे तो रहेंगे कैसे? यहाँ के लोग बड़े साहसी और निडर होते हैं। हालाँकि उनके पशुओं को और कभी-कभी मनुष्यों को हिंसक जानवरों से बहुत नुकसान पहुँचता है। फिर भी वे इनके डर से अपना काम करना नहीं छोड़ते। इन जंगलों में बहुत अंदर

जाओ, तो अनेक ऐसे अनुभव होते हैं जिनसे प्रकृति की अलौकिक सत्ता के आगे नतमस्तक हो जाना पड़ता है।"

दोनों बच्चे थोडी ही देर में जोशी जी से घुलमिल गए। उन्हें साहस और रोमांचकारी घटनाओं को सुनने, जानने और पढ़ने का बचपन से ही शौक था। बस आगे चली तो आदित्य ने जोशी जी से कहा – "दादा जी, आपने तो यहाँ के जंगलों को देखा होगा।"

"क्यों नहीं देखा बेटा, ज़रूर देखा है। देखा ही नहीं, मैंने उनको जाना भी है। इसी जानकारी को पाने के लिए बहुत से आदमी काल के गाल में जाते-जाते बाल-बाल बच पाते हैं।"

"क्यों ऐसा क्या होता है दादा जी?" दोनों बच्चों ने आश्चर्य से जोशी जी की ओर देखा।

"मैं समझ गया। तुम जानना चाहते हो, तो ध्यान से सुनो। ऐसे ही एक आदमी के बारे में जानता हूँ , जो जंगल में भटक कर एक बडी मुसीबत में फँस गया था।" जोशी जी कुछ पल रुके, फिर टेक छोड़ बच्चों की ओर मुड़ते हुए बोले, "आज से दस साल पहले की घटना है। वह यात्री केदारनाथ जा रहा था। हाँ, मैं तुम्हें एक बात और बता दूँ। रास्ते में रुद्रप्रयाग नामक एक स्थान आएगा। वहीं से एक रास्ता बदरीनाथ को जाता है, जिस पर तुम लोग जाओगे और दूसरा जाता है केदारनाथ की ओर। केदारनाथ के इसी रास्ते पर एक स्थान आता है गुप्तकाशी। इसी गुप्तकाशी से छह कि.मी. दूर बीहड़ जंगलों में एक दर्शनीय स्थल है कालीमठ। वहाँ तक जाने के लिए आज जैसे साधन तब नहीं थे। फिर भी साहसी यात्री दलों में इन जंगलों को पार कर कालीमठ के मंदिर के दर्शन करने जाते थे। मैं जिस यात्री की बात कर रहा हूँ, वह तय करके आया था कि कालीमठ का मंदिर अवश्य ही देखेगा। उसने आसपास के लोगों से वहाँ का पता पूछा,

तो लोग कहने लगे – 'वहाँ कोई अकेला नहीं जाता। चार-पाँच लोग ही मिलकर उस बीहड रास्ते को पार करने का साहस जुटा पाते हैं।'

मगर वह यात्री तो अकेला था। साथी कहाँ से लाता ! जाना उसे ज़रूर था। था भी बला का साहसी ! हाथ में एक डंडा और कंधे पर एक थैला, जिसमें ठंड से बचने के लिए एक ऊनी चादर थी। यही सामान था उसके पास। उसने सुबह का नाश्ता किया, अपना सामान उठाया और रास्ता पूछकर कालीमठ की ओर चल दिया।"

बच्चों की आँखों में रोमांच-मिश्रित कौतूहल तैरने लगा था। उनका ध्यान केवल दादा जी की आवाज़ की ओर था, जो कह रही थी – "पहाड़ की चढ़ाई और झाड़-झंखाड़ भरे रास्ते थे। इसी कारण रास्ते की दूरी और बढ़ गई थी। लगभग छह घंटे यात्रा की थकान के बाद वह एक नदी के पास पहुँचा। नदी यद्यपि बड़ी नहीं थी, किंतु पानी का बहाव इतना तेज़ था कि उसे पार करना, जैसे मौत को ही न्यौता देना था। वह किंकर्तव्यविमूढ़-सा उसके किनारे पर खड़ा इधर-उधर देख रहा था। इस नदी को पार किए बिना कालीमठ तक पहुँचना असंभव था। उसने गौर से नदी के बहाव को देखा। उसे आश्चर्य हुआ कि पानी बिलकुल काले रंग का था। उसे समझते देर नहीं लगी कि यह नदी कालीगंगा है। कालीगंगा के उस किनारे से कुछ दूर ही कालीमठ था।

उसे नदी पार करने की कोशिश में एक घंटा बीत गया। समय पाँच बजे से ज़्यादा नहीं था। किंतु इस गहन जंगल के कारण उसे लग रहा था, जैसे दिन डूब गया हो। इधर-उधर घूमने के बाद उसे नदी तट पर बाँसों का एक पुल दिखाई पड़ा, जो शायद नदी पार करने के लिए ही बनाया गया था। किंतु उस पुल को पार करना भी बड़े जोखिम का काम था। छोटा-सा पुल,

नीचे गर्जन-तर्जन करती वेगवती धारा ! बहुत देर तक तो वह साहस नहीं जुटा पाया। उसने मन को कडा किया और होनी को नियति के हाथों में सौंपकर पैर जमाकर पुल पर रखा। उसका साहस जवाब देने लगा था। फिर मन के दृढ़ संकल्प ने जैसे उसे सहारा दिया और वह किसी तरह उस पुल को पार कर गया। नदी के उस पार पहुँचकर उसने अनजाने रास्तों से आगे बढ़ना शुरू किया। तभी उसे कुछ दूर से शंख ध्वनि और फिर घड़ियाल की आवाज़ सुनाई पड़ी। उसे विश्वास हो गया कि कालीमठ में शायद आरती हो रही है। वह तेज़ी से उस दिशा में आगे बढा। कुछ ही देर में वह कालीमठ के पास खड़ा था। तभी पुजारी जी अंदर से आरती करके आए। उसे द्वार पर खड़ा देखकर अचंभित रह गए। बोले– 'अरे, आप कौन हैं? इस समय यहाँ कैसे आए? देखते नहीं, मौसम कितना खराब है ! शायद ज़ोर की बारिश हो।'

पुजारी की भावाकृति देखकर लग रहा था कि पुजारी उसे देखकर प्रसन्न नहीं है। उसने नम्रता से कहा – 'बहुत दिनों से कालीमठ देखने की इच्छा थी, इसलिए चला आया। मैं सीधे गुप्तकाशी से आ रहा हूँ। चला तो दिन चढ़े ही था, मगर रास्ते का सही ज्ञान न होने पर यहाँ आते-आते साँझ ढलने लगी। बहुत थक गया हूँ। अब वापस जाना भी मुश्किल है। कैसे भी इस अंधेरी रात में...'

उसकी बात सुनकर पुजारी ने कहा – 'वापस नहीं जाओगे, तो यहाँ कहाँ रहोगे? यहाँ तो रात में कोई नहीं रुकता। मै भी नहीं। बस पूजा हो गई। अब मैं अपने गाँव जा रहा हूँ, जो यहाँ से थोड़ी ही दूर पर है। तुम चाहो तो मेरे साथ चल सकते हो। भूखे भी होगे। यहाँ तो खाने के लिए भी कुछ नहीं मिलेगा। कैसे रहोगे रात भर यहाँ?'

उसने कहा – 'जैसे भी हो, रहूँगा। किसी पेड़ पर चढ़कर ही रात बिता दूँगा। लेकिन अब वापस जाने या आपके साथ चलने की शक्ति मुझमें नहीं है।'

उसकी बात सुनकर जैसे पुजारी को दया आ गई। बोले–'पास में ही एक कोठरी है, जो जंगलात के आदमियों की है। कभी-कभी उनका कोई अफसर यहाँ आकर ठहर जाता है। उसकी चाबी मेरे पास है। तुम रात भर वहीं रहो। हाँ, ध्यान रखना खिड़की और दरवाज़े सावधानी से बंद कर लेना। अंधेरे में यहाँ शेर, तेंदुआ और ऐसे ही हिंसक जानवर अक्सर आ जाते हैं।"

पुजारी उसे चाबी देकर अपने गाँव चला गया। उसने कोठरी खोलकर देखा। वहाँ माचिस और लैंप तो था ही, खाट-बिस्तर भी था। वह थका तो था ही दरवाज़े बंद कर बिस्तर पर लेट गया। लेटते ही नींद ने आ घेरा।

आधी रात के करीब अचानक आँखें खुलीं। बड़े ज़ोर की भूख लग रही थी। भूख के मारे पेट में दर्द भी होने लगा था। क्या किया जाए? उसने लैंप जलाया। इधर-उधर देखा। वहाँ एक घडे में पानी रखा था। गिलास भी था। भूख मिटाने के लिए वह गटागट दो गिलास पानी पी गया। मगर पानी से भूख थोड़े ही मिटने वाली थी! उसने धीरे से खिड़की खोलकर बाहर झाँका, तो कुछ दूरी पर आग जलती हुई नज़र आई। आग के आसपास दो-चार आकृतियाँ भी थीं। वे आपस में बातचीत कर रही थीं, मगर क्या ! यह स्पष्ट सुनाई नहीं दे रहा था।

यह देखकर उसके रोंगटे खड़े हो गए। बचपन में सुनी भूत-प्रेतों की अनेक कहानियाँ जैसे उसके आगे सजीव हो उठीं। आधी रात, भयानक जंगल, सांय-सांय करती हुई हवा ! बस, भूतों की बात धीरे-धीरे उसके मन में जड़ पकड़ने लगी। फिर लगने

लगा कि वे भूत ही है। आग जलाकर अपनी भूत लीला रच रहे होंगे।"

कहानी भूतों तक पहुँची, तो दोनों बच्चे सिहर उठे। आदित्य बोला – "दादा जी, वे जरूर भूत ही होंगे। डर के मारे तो उसकी घिग्घी बंध गई होगी !"

आदित्य की बात सुनकर जोशी जी ने कहा – "भूतों को याद कर भय तो लगता ही है। असल में भय ही भूत का दूसरा नाम है। मगर मै भूतों को नहीं मानता। मैंने कभी भूत देखे भी नहीं हैं। हाँ, भूतों के डर से उस आदमी को इतनी ठंड में भी पसीना आ गया था। फिर उसने जी कड़ा किया और सोचा – 'अब जो भी हो। कोई सहायता के लिए तो आने से रहा। मैं अकेला हूँ और न जाने कितने होंगे ये भूत ! इस कोठरी में बंद रहने से तो अच्छा यही है कि इन भूतों से साक्षात्कार किया जाए। यह तो निश्चित ही है कि भूत मेरे बारे में जान गए होंगे। क्या पता मानस-गंध पाकर ही यहाँ आए हों !'

उसने मन में कुछ निश्चय किया। धीरे से दरवाज़ा खोला और चादर ओढ़कर उस जलती हुई आग की ओर चल पड़ा। आग से थोडी दूर एक झाडी की आड में खड़ा होकर वह भूतों की टोह लेने लगा। सोचा–'देखूँ तो सही ये भूत क्या कर रहे हैं !'

भय भी क्या कमाल करता है! भूत-प्रेत और न जाने क्या-क्या, यूँ ही पैदा हो जाते हैं। उसे अपने पर हँसी आने लगी। और फिर रोकने पर भी हँसी का एक ज़ोरदार ठहाका गूँज उठा। वे असल में भूत नहीं थे। जंगलात के ही कुछ कर्मचारी थे, जो शायद रात में वहाँ रुके थे। अब वे जलती हुई आग पर रोटियाँ सेक रहे थे।

रोटियों की गंध से उसकी भूख और तेज़ हो गई। वह थोड़ा और आगे आया। इशारे से एक आदमी को अपने पास बुलाया। उसे देखकर वह आदमी समझा कि वह जंगलात का ही कोई अधिकारी है। वह आदमी सहमता हुआ उसके पास आया। बड़े अदब से बोला – 'कहिए हुज़ूर !'

उसने एक रुपया उस आदमी के हाथ पर रखते हुए कहा – 'लो, इनमें से एक रोटी मुझे दे दो।'

उसने रुपया नहीं लिया। बोला – आप इस मोटे अनाज की रोटी खाएँगे ! मैं आपको रोटी ऐसे ही ला देता हूँ। रुपया आपसे नहीं लूँगा।' कहकर वह एक रोटी ले आया। रोटी को देखकर वह अचंभे में रह गया। रोटी इतनी मोटी और बड़ी थी कि एक आदमी उसे पूरा नही खा सकता था। उसने आधी रोटी ले ली और चुपचाप अपनी कोठरी में चला आया।

नमक-मिर्च मिले हुए आटे की यह रोटी भूख में इतनी स्वादिष्ट लगी कि उसे याद नहीं आ रहा था कि इतनी स्वादिष्ट रोटी उसने कब खाई थी ! रोटी खाने के बाद पेट भरकर पानी पिया और लम्बी तान कर सो गया।

पेट भरा था, इसलिए गहरी नींद आई। दिन कब निकला, पता ही नहीं चला। दरवाज़े पर किसी ने थपकी दी तो आँखें खुलीं। दरवाज़ा खोला। देखा पुजारी गाँव से लौट आया था। उसके हाथ में खाना था। बोला – 'लो, रात भर के भूखे होगे। खाना खाओ और मंदिर के दर्शन करके वापस लौट जाओ। मौसम आज भी अच्छा नहीं है।'

सुबह-सुबह भूख नहीं थी। उसने उठकर नित्यकर्म के बाद हाथ-मुँह धोए, मंदिर को अंदर-बाहर से देखा और पुजारी के हाथ से खाना लेकर फिर वापस चल पड़ा। चलते समय पुजारी ने उसे दूसरा रास्ता बता दिया था। कहा – 'यह थोड़ा चढ़ाई वाला रास्ता तो है, किंतु इससे दोपहर से पहले ही गुप्तकाशी पहुँच जाओगे।' वह चल पड़ा। फिर कालीगंगा के तट पर आया। इस बार पुजारी जी ने जो रास्ता बताया था, वहाँ नदी का पुल पहले पुल से अच्छा था। बिना डर, खुशी-खुशी पुल पार कर आगे बढ़ चला। कालीमठ के मंदिर को देखकर उसकी इच्छा पूरी हो गई थी। वह बड़े उत्साह से अपने गंतव्य की ओर बढ़ रहा था। कुछ देर तक तो वह ठीक रास्ते पर चलता रहा, मगर फिर रास्ता भटक गया। कई घंटे चलने

के बाद भी गुप्तकाशी के आसपास का वह रास्ता नज़र नहीं आया, जिससे होकर वह आया था। अब घने जंगल के बीच खड़ा वह समझ नहीं पा रहा था कि किधर जाऊँ। इधर-उधर देखा भी, मगर कोई नज़र नहीं आया। उसने सोचा – 'वापस कालीगंगा पर ही चलना चाहिए। वहीं से सही रास्ता मिल पाएगा।'

उसके पास खाना था। जल के एक सोते के पास बैठकर खाना खाया। अचानक आँधी चलने लगी और देखते ही देखते भयंकर तूफान से सारा जंगल हिल उठा। आसपास सटे हुए पेड़ इस झंझावात से बुरी तरह हिलने लगे। टूट-टूटकर पेड़ गिर रहे थे। प्रकृति का रौद्र रूप देखकर उसे लगा, अब इस भयानक जंगल को पार करना आसान नहीं है। यह झंझावात रुके तभी आगे बढ़ना ठीक होगा। वह एक साथ खड़े दो-तीन पेड़ों के बीच छिपकर बैठ गया। कई घंटे बैठा रहा। मगर तूफान रुकने का नाम ही नहीं ले रहा था। अब कड़कडाहट के साथ बिजली चमकने लगी। वह जानता था कि बरसात के मौसम में इतनी भयंकर बारिश यहाँ नहीं होती, जितनी कि गरमी के इस मौसम में। यह बरसात अचानक होती है। कभी-कभी इतनी भयावह होती है कि झंझावात के एक ही झटके में सैंकड़ों पेड़ टूटकर इधर-उधर गिर जाते हैं। अभी-अभी आए इस झंझावात ने इतना तूफ़ान मचाया था कि जिस पगडंडी से वह आया था, कहीं नज़र नहीं आ रही थी।

वह उस तूफान के रुकने का बेसब्री से इंतज़ार कर रहा था। मगर तूफान रुकने के बजाए बूँदा-बाँदी शुरू हो गई। बिजली रह-रहकर कड़क रही थी। यह तय था कि कुछ ही देर में मूसलाधार वर्षा होगी। पेडों के नीचे ऐसी बरसात में सुरक्षित रहना असंभव था, इसलिए वह उठकर किसी सुरक्षित स्थान की खोज में भागा। घना जंगल, सन्नाटे भरता तूफान और घटाटोप बादलों का जमाव ! अब दिन में भी अंधेरा छा गया था। तेज़ बूँदों के

कारण वैसे भी ज्यादा तेज़ चलना मुश्किल पड रहा था। वह कुछ ही दूर चल पाया था कि सिर पर मोटी-मोटी बूँदों के आघात से तिलमिला उठा। ये बूँदें नहीं, बल्कि ओले थे। अब वह घबराया। सोचने लगा – 'अब घंटा भर भी ओलो की मार सहता रहा, तो जीवित रहना मुश्किल हो जाएगा।' मन में ज़िंदा रहने की चाह थी, इसलिए पूरी शक्ति से रास्ते पर गिरी झाड़ियों से टकराता, ओलों की मार सहता भाग रहा था। कपड़े इधर-उधर से फट गए थे। हाथ की घड़ी न जाने कहाँ गिर गई थी। फिर भी इन सबकी ओर उसका ध्यान नहीं था। इस समय वह सिर्फ ओलों की मार से अपनी रक्षा करने की कोशिश में था। अंत में उसे सहारा मिल ही गया।

भागते-भागते पहाड़ में एक गुफा दिखाई दी। बिना आग-पीछा सोचे, वह तेज़ी से गुफा के द्वार में घुसा और एक तरफ खड़ा हो गया। हालाँकि वह बुरी तरह भीग गया था, फिर भी इस गहरी गुफा में सुरक्षित था। सोच रहा था – 'अब आँधी-तूफान से मेरे प्राणों को कोई भय नहीं है।'

वह निश्चित होकर बैठ गया और सोचने लगा – 'कुछ देर में मौसम साफ हो जाएगा, तो मैं आज गुप्तकाशी पहुँचकर ही दम लूँगा'।"

दो

बस की गति के साथ-साथ मानो कहानी भी कदम से कदम मिला रही थी। जोशी जी प्रवाह में बोलते जा रहे थे, "इंतज़ार करते-करते अंधेरा घिरने लगा मगर मौसम उसी तरह गरजता-तरजता वन प्रांतर में अपना आतंक जमाए रहा। अब उसे समय का ज्ञान नहीं रह गया था, क्योंकि घड़ी तो उसके हाथ से पहले ही कहीं गिर चुकी थी। गुफा से बाहर झाँककर वह अनुमान लगा रहा था कि अब जल्दी ही अंधेरा घिरने वाला है। पूरा दिन जंगल में राह ढूँढ़ते, आँधी-तूफान से अपने को बचाते बीत गया था।

अब रात इसी गुफा में बितानी थी। मन में डर रहा था कि कहीं यह गुफा किसी हिंसक जानवर की ही न हो। इधर-उधर देखा, वह जहाँ बैठा था, उससे थोड़ा आगे एक स्थान और दिंखाई दिया। इस गुफा में से ही एक रास्ता और अंदर जा रहा था। उसने उसमें झाँककर देखा। वहाँ एक बड़ा-सा प्रवेश द्वार था, जिसमें दो-तीन आदमी एक साथ अंदर जा सकते थे। मगर अंधेरे में मालूम नहीं पड़ सका कि यह गुफा कितनी अंदर तक गई है। वह सब तिलिस्म जैसा था। गुफा के अंदर गुफा और उसमें भी कोई और गुफा ! क्या पता, उसके अंदर कौन है? कोई हिंसक जानवर, कोई प्रेतात्मा या कोई तपस्वी ! मगर गुफा के अंदर से जो दुर्गंध आ रही थी, उससे स्पष्ट था कि यह किसी तपस्वी का निवास स्थल नहीं हो सकता। यह तो किसी हिंसक जानवर का ही निवास स्थल हो सकता है। पहाड़ों में ऐसी गुफाएँ प्रकृति की ओर से अद्‌भुत देन होती हैं। कभी-कभी पहाड़ों के पत्थर टूटकर ऐसे गिरते हैं कि गुफाएँ अपने आप बन जाती हैं।

रात बिताने के लिए वह अंदर वाली गुफा के मुँह के पास रखे एक बड़े पत्थर पर बैठ गया। बुरी तरह थका हुआ था। पैर फैलाकर सोने के लिए वहाँ स्थान नही था। वैसे भी ऐसे भयावह स्थान में नींद कैसे आ सकती थी। धीरे-धीरे पूरा जंगल अंधेरे के तंबू में समा गया। वह घुटनों के बीच में सिर देकर बैठ गया। अब रात बीतने का इंतज़ार था। समय अपनी गति से सरक रहा था। वह बैठा-बैठा ही नींद की झपकियाँ ले रहा था। तभी सरसराहट की आवाज़ से उसकी चेतना जगी। लगा कि कोई भयानक आकृति उस गुफा के द्वार पर आकर लंबी-लंबी साँसें ले रही है। यह निश्चित था कि वह आदमी नहीं है। इस गुफा में रहने वाला कोई जानवर ही है, जो शायद अपना शिकार करके वापस आया है।

घुप्प अंधेरे में वह उसको देख नहीं पा रहा था। किन्तु गुर्राहट और साँसों की दुर्गंध भरी आवाज़ से उसकी चेतना धीरे-धीरे लुप्त हो रही थी। मौत को इतने करीब वह जीवन में पहली बार देख रहा था। वह यह सोच रहा था – 'मैंने भले ही इसे न देखा हो, इसने मुझे अवश्य ही देख लिया है। आँधी-तूफान में यहाँ तक आते-आते यह इतना थक गया है कि सुस्ताने के लिए लंबी साँसें ले रहा है। बस अब कुछ ही देर में यह मुझे अपना शिकार बना लेगा।'

उस भय से उसके सोचने की शक्ति जवाब देने लगी थी और उसे लग रहा था कि शरीर सुन्न पड़ता जा रहा है। तभी उस जानवर ने अपने भीगे हुए शरीर के पानी को झाड़ने के लिए इतनी ज़ोर का झटका दिया कि उस आदमी के शरीर का पूरा हिस्सा उस पानी में भीग गया। वह जैसे मरने के लिए तैयार था। उसने घुटनों के अंदर अपना सिर छुपाकर आँखें भींच लीं। काँपता हुआ इंतज़ार करने लगा कि कब वह जानवर उसे अपना शिकार बनाता है।

इसी छटपटाहट में कुछ समय और बीता। फिर उस जानवर ने अचानक गुफा के अंदर छलाँग लगा दी और अपने साथ लाए हुए शिकार को अंदर खींचने लगा। उसका शिकार काफी वज़नी था। शायद कोई भैंसा रहा हो ! अंदर खींचने में उसे पूरी शक्ति लगानी पड़ रही थी। खींचे जाने से पहाड़ के छोटे-छोटे पत्थर उछल-उछलकर इधर-उधर गिर रहे थे। खड-खड की आवाज़ से पूरी गुफा जैसे थर्रा उठी थी। वह जैसे-तैसे शिकार को खींचकर अंदर ले गया। खींचने की आवाज़ कुछ देर बाद धीमी होती हुई बंद हो गई। इससे अनुमान लगा सकना आसान था कि वह गुफा काफी अंदर तक गई थी।

इसके बाद उसकी चेतना धीरे-धीरे लौटी। मन में आया कि यहाँ से उठे और बाहर चला जाए, मगर बाहर भी तो खतरा ही है। अच्छा यही है कि जो होना है, उसे भुगते। यहीं बैठा रहे। मौत के इतने करीब आकर उसने ज़िंदगी के बारे में सोचना छोड़ दिया था।

कई घंटे बीते। उसके बाद गुफा के अंदर फिर सरसराहट की आवाज हुई। वही जानवर गुफा के अंदर धीरे-धीरे चल रहा था। उसने समझ लिया कि वह अपना शिकार खाकर अब उसे खाने आया है। जानवर की गुर्राहट से पहले उसके शरीर में कंपन हुआ और फिर वह अर्द्धमूर्च्छित अवस्था में पत्थर के एक ओर सिर रखकर बैठ गया। समय कैसे बीता, उसे नहीं मालूम। उसका सिर गुफा के द्वार से सटा था। उसे अपने पंजे के एक ही वार से पकड़ पाना जानवर के लिए संभव था। अचानक गुफा के बाहर किसी दूसरे जानवर के चिल्लाने की आवाज़ आई। उस आवाज़ को सुनकर गुफा के अंदर वाला वह दैत्य जैसे क्रोधित हो उठा और वहीं खड़ा-खड़ा दहाड़ा। दहाड़ सुनते ही उसका बचा-खुचा साहस भी जवाब दे गया। अब वह पत्थर से लुढ़ककर नीचे आ

पड़ा। इसी बीच जानवर दहाडकर गुफा के द्वार से उछला और बाहर की ओर भाग गया।

जब कुछ देर में उसकी चेतना लौटी, तो दिन का उजाला गुफा में झाँक रहा था। पत्थर से गिरने के कारण उसके हाथ-पैरों में खरोंचें आ गई थीं। जोरों का दर्द था। सहमता-सहमता वह बाहर आया। इधर-उधर देखा। मौत के चंगुल से वापस आई अपनी ज़िंदगी को सुरक्षित देख वह कालीगंगा की ओर बढ़ चला। सौभाग्य था कि जंगलात में काम करने वाले एक-दो आदमी उसे मिल गए। उनसे रास्ता पूछकर पूरी तरह थके हुए शरीर को ढोता हुआ वह किसी तरह गुप्तकाशी पहुँच गया।

ज़ोरों की भूख लग रही थी। वह एक चाय की दुकान पर पहुँचा। लोग खुसर-पुसर कर रहे थे। एक कह रहा था – 'अरे, वह फिर आ गई। पिछले एक साल से कहीं गुम हो गई थी। बहुत ही चालाक है। शिकारियों के भी हाथ नहीं आती। कहाँ रहती है, यह भी कोई खोज नहीं पाया। सुना है पिछले महीने वह बस्ती से दो बच्चों को उठाकर ले गई। अब क्या होगा भइया ! सावधान रहना होगा।'

चाय पीते हुए उसने उत्सुकता से पूछा – 'अरे भई, कौन उठाकर ले गई बच्चों को?"

बात सुनकर वह व्यक्ति हँसने लगा। बोला – 'अरे भइया, तुम तो कोई यात्री लगते हो। तुम्हें इन बातों से क्या लेना-देना। हम उस आदमखोर शेरनी की बात कर रहे हैं, जिसने गुप्तकाशी और कालीमठ के बीच में आतंक फैला रखा है।'

उनकी बात सुनकर रात का सारा भयावह दृश्य उसकी आँखों के आगे घूम उठा। उसे निश्चय हो गया कि रात जिस मौत से उसका सामना हुआ था, वह वही आदमखोर शेरनी थी। ठंड और

भूख के मारे उसका बुरा हाल था, इसलिए उसने कुछ बिस्कुट लिए तथा एक कप चाय और पी। फिर उसने कहा – 'मैं जानता हूँ, कहाँ रहती है वह आदमखोर शेरनी।'

'तुम जानते हो? अरे तुम कैसे जानोगे ! अपनी हालत तो देखो। कपड़े फटे हैं। हाथ-पैर खरोंचों से भरे हैं। तुम क्या कोई शिकारी हो?' एक बोला।

'मैं कुछ नहीं हूँ भइया ! मगर एक रात उसके साथ रहकर आया हूँ। तभी तो मेरी यह हालत हुई है,' उसने कहा।

'यह कोई पागल लगता है। कहता है आदमखोर शेरनी के साथ रह कर आया हूँ !' दूसरा बोला।

तीसरे ने हँसते हुए कहा – 'लगता है वह इसकी कोई रिश्तेदार है, जो इसके साथ रही और इसे ज़िंदा छोड़ दिया'।"

यह घटना बताकर जोशी जी तो चुप हो गए, किंतु आलोक ने कहा – "दादा जी, सचमुच क्या यह सच्ची कहानी है। आदमखोर शेरनी के सामने पड़ जाने पर भी क्या कोई आदमी ज़िंदा रह सकता है?"

जोशी जी ने मुस्कुराकर कहा – "तुम ठीक कहते हो। मैं भी यही सोचता हूँ कि वह आदमी ज़िंदा कैसे लौट आया ! मगर वह ज़िंदा है, यह बात भी मैं जानता हूँ।"

"वह ज़िंदा है, कहाँ रहता है?" आदित्य ने हैरानी से पूछा।

"क्या तुम उस आदमी से मिलना चाहोगे?" जोशी जी बोले।

आदित्य बोला – "हाँ, क्यों नहीं दादा जी ! ऐसे बहादुर आदमी से तो मिलना ही चाहिए। मगर वह मिलेगा कहाँ?"

"अच्छा तुम आँखें बंद करो। मैं उसे अभी बुलाता हूँ", कहकर जोशी जी मुस्कुराए। बच्चों ने आँखें बंद कर लीं। फिर जोशी जी

के कहने पर आँखें खोलीं। बोले – "दादा जी, कहाँ है वह?"

"बिलकुल तुम्हारे सामने," जोशी जी ने कहा। अब बस के कई यात्री उनकी ओर देखने लगे।

"दादा जी आप !" आलोक बोला।

"हाँ, मैं ज़िंदा हूँ, इसीलिए तो तुमको आपबीती सुना पाया।" जोशी जी ने फिर कहा – "मेरे पिता वन अधिकारी थे। वह एक बड़े शिकारी भी थे, इसलिए मैं भी कई बार जोखिमों से जूझा हूँ।"

आलोक ने पूछा – "दादा जी, जब आप कई बार इन स्थानों में आ जा चुके हैं, तो अब बदरीनाथ क्यों जा रहे हैं?"

जोशी जी अपनी सफेद लम्बी दाढ़ी पर हाथ फेरते हुए बोले – "मैं इस समय बदरीनाथ नहीं जा रहा। मैं तो देवप्रयाग तक ही तुम्हारे साथ हूँ। किंतु वर्ष में एक बार बदरीनाथ या केदारनाथ ज़रूर जाता हूँ, क्योंकि मुझे पहाड़ों से लगाव है। प्रकृति से मोह है। मैं बार-बार इन स्थानों को देखता हूँ। पर हर बार नया देखने और जानने को शेष रह जाता है। प्रकृति का अनुपम सौंदर्य अनंत है बेटा ! इसका पार पाना सम्भव नहीं। मैं इसके हर चित्र को अद्भुत कलाकारी के रूप में देखता हूँ और श्रद्धा से नमन करता हूँ।"

"दादा जी, आप देवप्रयाग में ही हमारा साथ छोड़ देंगे। फिर हमें आगे के स्थानों की जानकारी कौन देगा?" आदित्य ने पूछा।

"हाँ, बात तो तुमने ठीक ही कही है बेटा ! मगर इस समस्या का भी हल है और वह हल मैं अभी ढूँढ़ता हूँ।" कहते हुए उन्होंने अपने झोले में से एक पुस्तक निकालकर आदित्य के पिता को दी और कहा – "यह मैंने ही लिखी है। इसमें उत्तराखंड के बारे में पूरी जानकारी देने का मैंने प्रयास किया है। आप इसे पढ़कर बच्चों को इस यात्रा में आने वाले स्थानों के बारे में जानकारी दें, क्योंकि यात्राओं का मतलब ही है मेल-मिलाप और नई जानकारी पाना।"

"मगर दादा जी, यह उत्तराखंड कहाँ पर है?" आलोक ने पूछा।

"हम जहाँ से आ रहे हैं और जहाँ को जा रहे हैं, यह सारा ही क्षेत्र उत्तराखंड कहलाता है।" यह कहकर जोशी जी चुप हो गए।

बच्चे बस की खिड़कियों से बाहर का दृश्य देखने लगे। पहाड़ों की सिलसिलेवार जाती ऊँची-नीची कतारें और उन पर बने हुए सीढ़ीनुमा खेत, कहीं-कहीं हरियाली के सायों के नीचे बहते हुए जलप्रपात उनका ध्यान बरबस ही अपनी ओर खींच रहे थे। आलोक के माता-पिता बैठे-बैठे झपकियाँ ले रहे थे और आदित्य के पापा जोशी जी की किताब में कहीं खो गए थे।

बदरीनाथ को जाती हुई यह बस सुबह के झुटपुटे में हरिद्वार से चली थी और दिन के भरपूर उजाले में देवप्रयाग आकर रुक गई। दीनानाथ जी को देवप्रयाग ही उतरना था। वह अपना सामान लेकर नीचे उतर आए। हल्की-हल्की बूँदा-बाँदी शुरू हो गई थी। फिर भी आदित्य और आलोक विदा करने बस से नीचे उतर आए। जोशी जी ने दोनों बच्चों को अंगुली से इशारा करते हुए कहा – "देखो, देवप्रयाग की यह बस्ती छोटी-सी पहाड़ी पर बसी है। यहाँ लगभग 300 घर होंगे। उधर देखो, अलकनंदा नदी आ रही है। तुम्हें इसी के किनारे आगे जाना है। और हाँ, वो जो दूसरी जलधारा बड़े वेग से भागती हुई अलकनंदा से मिलने आती दीख पड रही है, उसी का नाम भागीरथी है। कहा जाता है कि बहुत पहले राजा भगीरथ इसे लाए थे। अब थोड़ा ऊपर आओ। मैं तुम्हें इन दोनों नदियों का संगम दिखाता हूँ। देखा, दोनों नदियाँ जब एक जलधारा में मिलती हैं, तो कितना शोर होता है। इनकी जलधारा में नहाना सम्भव नहीं है, इसलिए तुम देख रहे हो, यात्री सीढ़ियों पर बैठकर ही नहा रहे हैं।"

दोनों बच्चे बड़ी तन्मयता से वह सब देखने लगे। तभी जोशी जी ने उनका ध्यान भंग करते हुए कहा – "वह मंदिर की चोटी

नजर आ रही है। यही यहाॅ का रघुनाथ जी का मंदिर है। इस मंदिर में रघुनाथ जी की मूर्ति काले पत्थर से बनी है। इसकी ऊँचाई लगभग दो मीटर है। अब तुम लोग जाओ। मुझे कुछ देर देवप्रयाग ठहरकर आगे एक गाँव में जाना है। इस यात्रा में बहुत कुछ ऐसा है, जो तुम्हारे अंदर साहस जगाएगा। अच्छे बच्चों को हमेशा खूब पढ़ना-लिखना चाहिए और दूसरों की भलाई की बात सोचनी चाहिए। तुम खूब अच्छे बनो। नाम कमाओ। यही मेरा आशीर्वाद है।" ऐसा कहकर जोशी जी चले गए। बच्चे भी वापस आकर बस में बैठ गए, किंतु उनके उदास चेहरों को देखकर लग रहा था कि जोशी जी की विदाई उन्हें खली थी।

बस फिर चल पडी तो आदित्य ने खिड़की से बाहर झॉककर देखा। वर्षा रुक गई थी। दूर तक पर्वत की चोटियों का सिलसिला बस के साथ-साथ ही भाग रहा था। घुमावदार रास्तों को नापती सड़क बीच-बीच में पुलों के द्वारा पर्वत की एक चोटी से दूसरी चोटी तक जा पहुॅचती थी। आदित्य देख रहा था कि नदी की धारा हर जगह उनके साथ-साथ चल रही है। उसने बीच-बीच में अपने पापा से चलती हुई जलधारा के बारे में पूछा। पापा ने कुछ देर पहले उसका नाम भागीरथी बताया था, अब रुद्रप्रयाग में आदित्य ने मंदाकिनी को अलकनंदा में मिलते देखा था। इन तीनों का मिलाप ही देवप्रयाग से आगे गंगा बना था।

आदित्य को यह बात समझ नहीं आ रही थी। उसने पापा से पूछा – "पापा, भागीरथी, मंदाकिनी और अलकनंदा जब अलग-अलग नदियाँ हैं, तो इन सबका नाम गंगा क्यों हैं?"

"बेटे, हिमालय पहाड़ से बहुत सारी जलधाराऍ निकलती हैं। ये सभी भाग-दौड करती, कहीं न कहीं एक दूसरे से आकर मिल जाती हैं। इन सभी मिली-जुली जलधाराओं का नाम गंगा है। गंगा नदी इनसे मिलकर बनी है, इसीलिए वह हमारी महान नदी है।

हमारी सभ्यता और संस्कृति का लम्बा इतिहास इसी नदी के किनारे बढा और फलाफूला।"

"पापा, तीर्थों का क्या मतलब होता है?" आदित्य ने पूछा।

"बेटा, तीर्थो का सीधा-सादा मतलब है वह स्थान, जहाँ आकर हम भले काम करने की प्रतिज्ञा करते हैं और दूसरों की सेवा का पाठ पढ़ते हैं।"

"इससे क्या होता है पापा?"

"इन कामों से इंसान सच्चा इंसान बनता है। दो हाथ और दो पैरों से ही हम इंसान नहीं बन जाते। जब तक हमारे अंदर दूसरे के लिए नफरत है, बुराई है, हम अपने स्वार्थ के लिए दूसरों को धोखा देते हैं, तब तक हम सच्चे इंसान नहीं हैं। सच्चे इंसान तभी बनते हैं, जब इन्हें छोड़ देते हैं।"

आदित्य के मन में अनेक प्रश्न तारों की तरह टिमटिमा रहे थे। उसने कहा – "पापा, लगता है, पहले लोग बहुत यात्राएँ करते थे। उसी के कारण हमें पर्वतों, नदियों, नालों, सागरों और जंगलों के बारे में बहुत सारी जानकारी मिलती है। हमारी किताबों में भी ये जानकारियाँ हैं।"

शर्मा जी बोले – "बेटे, घूमना और खोज करना तो पहले की तरह आज भी जारी है, क्योंकि इसके बिना हमें दुनिया की सही जानकारी नहीं हो सकती। बात भूगोल की हो, इतिहास की या विज्ञान की – सभी के लिए खोज करनी पड़ती है। दुनिया में यह काम न होता, तो दुनिया कैसे आगे बढ़ती? हमारी महान विभूतियों ने खुद रास्ता खोजकर दूसरों को जानकारी दी है।"

इसी बीच बारिश फिर शुरू हो गई। "उधर देखो, सामने सड़क पर इतना पानी कहाँ से आ गया?" आदित्य ने कहा।

"यह झरने का पानी है। बरसात में यही तो होता है इन सड़कों पर। कभी-कभी तो इसी पानी के तेज बहाव में आकर बसें फिसलकर नीचे खाई में जा गिरती हैं।" आदित्य को पापा ने बताया।

आदित्य ने नीचे की ओर देखकर कहा – "पापा, सचमुच बड़ा भय लगता है। बड़े खतरनाक हैं ये रास्ते।"

"बेटे, खतरों से कभी नहीं घबराना चाहिए। खतरा झेलकर ही सफलता मिलती है। जो खतरों से घबरा गया, बताओ, क्या उसे रास्ता मिलेगा?"

"पापा, भूख लग रही है। क्या बस कहीं रुकेगी नहीं?"

"अभी कुछ देर में श्रीनगर आने वाला है। वहीं बस रुकेगी। तभी खाना खाएँगे।"

"श्रीनगर ! श्रीनगर यहाँ कहाँ से आ गया पापा? श्रीनगर तो जम्मू और कश्मीर की राजधानी है।"

"वह श्रीनगर और है। यह श्रीनगर चमोली ज़िले की तहसील है। बहुत ही खूबसूरत जगह है। यह गढ़वाल की पुरानी राजधानी है। इस नगर को चौदहवीं शताब्दी में महाराजा जयपाल ने बसाया था। यहाँ कमलेश्वर महादेव का मंदिर है। तुम वहाँ पहुँचकर देखोगे कि गंगा इस घाटी में धनुषाकार होकर बहती है। कहते हैं कि रावण का वध करने के बाद यहाँ आकर राम ने शिव की पूजा कर उन्हें प्रसन्न किया था।"

पापा की बात सुनकर आलोक ज़ोर से हँसा।

"हँस क्यों रहे हो?"

"पापा, आप तो ऐसे बता रहे हैं, जैसे आपने श्रीनगर देखा हो। अभी तो वह आया ही नहीं और आपने सारी जानकारी दे दी।"

"तुम क्या समझते हो ! जोशी जी की किताब पढ़कर मैंने श्रीनगर, केदारनाथ और बदरीनाथ के रास्तों के बारे में सब कुछ जान लिया है। अब मैं तुम्हें सही-सही जानकारी देता रहूँगा। मगर सावधान ! श्रीनगर से ठंड शुरू हो जाएगी। बदरीनाथ तक यह ठंड बढ़ती ही जाएगी। श्रीनगर से आगे चलने पर बर्फ से ढकी चोटियाँ भी देखने को मिलेंगी।"

"तब तो बड़ा मजा आएगा।"

"लो, श्रीनगर की सीमा आ गई। यहाँ गढ़वाल विकास मंडल के विश्राम गृह में रुकेगे। नहा-धोकर खाएँगे-पिएँगे फिर कुछ देर आराम करेंगे।"

"इसके बाद कल फिर इन्हीं रास्तों पर चकरघिन्नी खाएँगे," कहते हुए दोनों बच्चे हँसने लगे।

रातभर श्रीनगर में विश्राम करने के बाद अगले दिन प्रातःकाल बस बदरीनाथ की ओर चल पड़ी। श्रीनगर से लगभग 30 कि.मी. दूर पौढ़ी आया। यह जिले का मुख्यालय है। यहाँ से हिमालय की छटा देखते ही बनती है! इसके बाद बस रुद्रप्रयाग पहुँची। रुद्रप्रयाग आते ही शर्मा जी ने कहा – "देखो, यही है रुद्रप्रयाग, जिसके बारे में जोशी जी ने तुम्हें बताया था। गौर से उधर देखो। वह अलकनंदा और मंदाकिनी का संगम है। यहाँ से अलकनंदा के साथ-साथ चलकर हम बदरीनाथ पहुँचेंगे और वह दूसरा रास्ता मंदाकिनी के साथ चलकर केदारनाथ को जाता है।"

वहाँ उतरकर यात्रियों ने कुछ खाया-पिया। बस फिर आगे चल पड़ी। इसके बाद कर्णप्रयाग आया। यहाँ पिंडर और अलकनंदा का संगम होता है। पुस्तक में पढ़कर शर्मा जी ने कहा – "देखो बच्चो, महाभारत के महाबलवान पात्र कर्ण ने यहाँ तपस्या की थी, इसीलिए इसका नाम कर्णप्रयाग पड़ गया।"

इसके आगे का रास्ता बहुत ही सुदर था। रास्ते भर छोटी-छोटी बस्तियाँ दीख पड़ती थीं। पहाडों पर चरती भेड-बकरियाँ और काम करती हुई महिलाएँ इस सौंदर्य को और भी बढा रही थीं। कर्णप्रयाग से आगे आता है नंदप्रयाग। यहॉ पर अलकंनंदा और मंदाकिनी का संगम होता है। इसके बाद चमोली आता है। यह बहुत ही सुंदर और स्वास्थ्यवर्धक स्थान है। इसी रास्ते पर पड़ने वाली पीपलकोटी माल्टा, नारंगी, नींबू के लिए प्रसिद्ध है। शर्मा जी रास्तों की जानकारी देते जा रहे थे। दोनों बच्चे उसे सुन-सुनकर आसपास के दृश्यों से परिचय प्राप्त कर रहे थे। पीपलकोटी पहुँचते-पहुँचते दो बज गए। यहीं पर उन्होंने दोपहर का खाना खाया। आगे चले तो यात्रा और दुर्गम होती चली गई।

तीन

पर्वत के घुमावदार चक्करों को पार करती हुई बस शाम होने तक जोशीमठ पहुँच गई। आज की रात यहीं बितानी थी। दोनों बच्चे पहले तय कर चुके थे कि जोशीमठ में कुछ देर घूमकर यहाँ के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे, मगर बस से उतरते ही एक ऐसी घटना घटी, जिसने दोनों बच्चों को उदास कर दिया।

रामलाल के घर आज चूल्हा नहीं जला था। आज क्या, कल रात भी वह भूखा ही सो गया था। खाना बनता भी कैसे, घर में न आटा-दाल था, न ही पैसे। रामलाल की माँ की रोते-रोते आँखें सूज गई थीं। कल सुबह रामलाल का पिता लकड़ी लेने जंगल में गया था। मगर वह लौटा ही नहीं। बस्ती वालों ने एक खड्ड में उसकी लाश पडी देखी। शायद लकड़ियॉ काटते हुए उसका पैर फिसल गया था। वैसे वह रोज़ ही मुँह अंधेरे उठकर जंगल से लकड़ी लाता था। फिर खा-पीकर मेहनत-मजदूरी करने निकल जाता। मेहनत-मज़दूरी के नाम पर वह तीर्थ यात्रियों का सामान पीठ पर रखकर ढोता। इसी काम से परिवार की गुज़र-बसर होती थी।

बाप के मरने का सबसे ज़्यादा दुःख रामलाल को था। वह इसलिए कि चौदह वर्ष की कम आयु में अब वह इस घर का कमाने वाला एकमात्र सदस्य था। मॉ की सूजी हुई आँखों और छोटे भाई-बहनों की बुझी-बुझी सूरत को देखकर उसे लग रहा था, इन सबकी भूख का इलाज अब मुझे करना होगा।

वह हाथ में रस्सी लिए बस अड्डे पर आकर खड़ा हो गया। बसें रुकतीं। वह सामान उठाने के लिए लपकता, मगर यात्री बच्चा समझ, उससे सामान उठवाने में कतराते थे। एक-दो यात्रियों का

सामान उसे उठाने को मिल गया। पैसे हाथ में आए तो रामलाल ने कुछ खा-पी लिया। इसी तरह दौड-धूप करते शाम ढलने लगी।

तभी दो बसें आकर रुकीं। यात्री बस से अपना सामान उतारने लगे। उन्हें सड़क से कुछ हटकर पर्यटन विभाग के अतिथि गृह में ठहरना था। तभी किसी ने रामलाल से कहा – "अय, लड़के ! चल हमारा सामान उठाकर पहुँचा दे।"

रामलाल सामान उठाने लगा। मगर पूरे दिन भर का थका था। जैसे ही सूटकेस उठाया, धम्म से नीचे गिर पडा। सूटकेस फिसलकर दूर जा गिरा। बरसात की थोड़ी-सी कीचड उस पर लग गई। यह देखकर सूटकेस वाला आगे बढ़ा। उसने औधे मुँह पडे रामलाल की पीठ पर एक लात जमाते हुए कहा – "सारा सूटकेस खराब कर दिया।"

मगर रामलाल को होश नहीं था। तभी एक-दो कुली और आ गए। बोले –"बाबू, इसे क्यों पीट रहे हो?"

"सूटकेस खराब कर दिया। इस पर रहम करूँ?" सूटकेस वाला जैसे आपे से बाहर होता जा रहा था। तभी देखते-देखते भीड़ इकट्ठी हो गई। बस के यात्री भी बाहर आ चुके थे। रामलाल तब तक होश में आ चुका था। वह बैठा-बैठा सुबक रहा था।

"पापा, यह बेचारा लड़का ! हमें इसकी सहायता करनी चाहिए," आदित्य ने कहा।

"बेटा, हमें इस चक्कर में नहीं पडना। यह सूटकेस वाला बहुत ही झगड़ालू आदमी है। बस में भी यह रास्ते भर ज़ोर-ज़ोर से बोलता आया है।"

"मगर पापा, इस लड़के ने क्या कसूर किया। देखिए, इसके माथे पर चोट लगी है। सब देख भर रहे हैं।"

सूटकेस वाला अभी भी शांत नहीं हुआ था। उसने सूटकेस

उठा तो लिया, मगर रामलाल को शायद वह और सजा देना चाहता था। वह उसे एक चॉटा और लगाना ही चाहता था कि तभी पीछे से उसकी गरदन पर एक करारी चपत पडी। सूटकेस वाले का सिर भन्ना गया। उसने क्रोध से गरदन घुमाकर पीछे की ओर देखा। किसी ने मज़बूत हाथों से उसकी गरदन पकडते हुए कहा – "शर्म नहीं आती एक मासूम लडके पर हाथ छोडते। आ मुझसे भिड़, अभी तेरी अकल दुरुस्त करके रख दूँगा। तूने समझा, यहॉ इसका कोई नही। अरे, जोशीमठ में जिसका कोई नहीं, उसका मैं हूँ। अब ज़रा हाथ उठाकर देख।"

सूटकेस वाले को ललकारने वाला मज़बूत कद-काठी का एक दुकानदार था, जिसका नाम था नंदलाल। उसकी चपत खाकर सूटकेस वाले की गरदन शर्म से झुक गई। आसपास खड़े यात्री उसे नफरत से देख रहे थे। कुछ देर में लोग बातें करते तितर-बितर हो गए। नंदलाल ने दुकान से थोड़ा खाने का सामान रामलाल को दिया। कहा – "कल से तू मेरी दुकान पर आकर काम करना।"

यह घटना देखकर आलोक से रहा नहीं गया। वह अपनी मम्मी से पूछ ही बैठा – "मम्मी, अंकल कह रहे थे, तीर्थ पर हम अच्छे काम करने की कसम लेने आते हैं। तब यह सूटकेस वाला क्यों आया है? यह तो अच्छा आदमी नहीं है।"

मम्मी क्या उत्तर देतीं। वह जान गई कि इस घटना से आलोक के मन को गहरी चोट लगी है। वह उसे इधर-उधर की बातें करके बहलाने लगीं। अचानक बिजली चली गई। चारों ओर अंधकार छा गया। पहाड़ की अंधेरी रात वैसे ही भयावह होती है। आदित्य और आलोक पास-पास के कमरों में ठहरे थे। खाना खाकर दोनों कुछ देर तक बैठे बातें करते रहे, मगर थके थे। फिर अपने-अपने कमरे में जाकर बिस्तर पर लेट गए। लेटते ही नींद ने उन्हें आ घेरा।

चार

जोशीमठ से बस आगे चली तो ठंड की सिकुड़न और बढ़ गई। यात्रियों ने ऊनी कपड़े पहन लिए। आगे का पहाड़ी रास्ता और भी कठिनाई भरा था, क्योंकि यहाँ से बदरीनाथ तक यातायात के लिए एक तरफ का रास्ता ही खुला रहता है। जब बदरीनाथ से यात्री आगे आते हैं, तो उधर से आने वाले वाहनों का रास्ता बंद कर देते हैं। जोशीमठ से वाहन आने शुरू होते हैं, तो उधर जाने वालों का रास्ता बंद कर दिया जाता है। यहाँ बरसात कब हो जाए, अंदाज़ा लगाना कठिन है। बरसात होने से रास्ते की फिसलन बढ़ जाती है। ऐसे में बसों को सावधानी से ले जाना पड़ता है। सड़क के एक ओर ऊँचे-ऊँचे पहाड़ और दूसरी ओर बहुत निचाई से बहने वाली नदी। थोड़ी सी भी असावधानी भयानक दुर्घटना का कारण बन सकती है।

बस पांडुकेश्वर के पास पहुँची ही थी कि शर्मा जी ने दूर से कहा – "लो, पांडुकेश्वर आ गया।"

आलोक ने कहा – "आ तो गया अंकल, मगर इसके बारे में कुछ बताइए न ! तभी तो देखने में आनंद आएगा।"

"पहले बस से नीचे उतरो। हाँ, इतना जान लो कि यह महाभारत कालीन स्थान है। यहाँ दो मंदिर हैं। हम उन्हें देखने चलते हैं। वहीं उनके बारे में तुम्हें कुछ बताऊँगा।"

यात्री बस से नीचे उतर गए। पांडुकेश्वर गाँव का रास्ता सड़क से काफी दूर था। गाँव तक पहुँचने के लिए पत्थरों से बनी सीढ़ीनुमा पगडंडी थी। रास्ते में एक-दो झरने भी थे। हिमालय की हरियाली यहाँ और दर्शनीय हो उठी थी।

इस समय धूप खिलकर चारों ओर फैली हुई थी। बदन को चुभने वाली ठंडी हवा में यह गुनगुनाती धूप भली लग रही थी। झरने के पास दो महिलाएँ बैठी हुई कपड़े धो रही थीं। तभी एक बूढ़ी महिला पीठ पर लकड़ियों का गट्ठर उठाए वहाँ आई। उसने गट्ठर एक ओर उठाकर रख दिया। फिर कपड़े धोने वाली महिलाओं के पास आकर बैठ गई। बोली – "कुछ सुना तुमने?"

"क्यों क्या हुआ ताई?" उनमें से एक ने कहा।

"अरे, अभी-अभी सौ दो सौ लोगों को मैंने पैदल बदरीनाथ की ओर जाते देखा है।"

"तो क्या हुआ? कौन नई बात है? रोज़ ही कितने लोग पैदल, आते-जाते हैं।" एक महिला ने जवाब दिया।

"यह बात नहीं। यह किसी बड़े पहुँचे हुए साधु की टोली थी। सब उन्हीं के भक्त थे। ये हरिद्वार से पैदल आ रहे हैं। सुना है, बदरी मंदिर के दर्शन करके दिल्ली तक पैदल ही जाएँगे।"

"हाँ, इस जमाने में तो यह नई बात है। मोटर-बस नहीं मिली होगी बेचारों को।"

"अरी, नहीं। कई बसें उनके साथ सामान लेकर चल रही थीं।"

"फिर क्या बात है ताई? कोई खास खबर सुनकर आई हो क्या?"

"लोग कुछ बता तो रहे थे। पूरी बात मेरी समझ में तो आई नहीं", कहते हुए बुढिया चुप हो गई।

"मैं बताता हूँ ताई", गाँव के मुखिया ने कहा, "ये यात्री देश के भाईचारे और एकता की बात घर-घर पहुँचाने के लिए निकले हैं। सभी धर्मों के लोग इस पदयात्रा में हैं। ये लोग बदरीनाथ से लौटकर गाँव-गाँव जाएँगे। वहाँ लोगों को इकट्ठा कर, उन्हें

बताएँगे कि इस देश की खुशहाली के लिए हमें आपसी भेदभाव भूलकर देश के निर्माण के लिए काम करना चाहिए। ये सभी देश की इस उत्तरी सीमा से इसी संकल्प को लेकर चलेंगे। फिर दक्षिण छोर पर कन्याकुमारी तक इसी संदेश को जन-जन तक पहुँचाएँगे।" बातें चल रही थीं कि इसी बीच दो-चार लोग वहाँ आ गए।

"बात तो बड़ी अच्छी है। मगर क्या लोग इनकी बातें मानेंगे। इस कलयुग में कौन किसके भले की सोचता है !" ताई ने निराशा भरे स्वर में कहा।

"बूँद-बूँद से घड़ा भरता है ताई ! कुछ न कुछ अच्छे काम होते रहते हैं, तभी दुनिया में आज भी अच्छाई टिकी है," मुखिया ने कहा।

भीड़ में से एक नवयुवक बोला – "मगर खाली भाईचारे की बात कहने से काम नहीं चलता। हम जैसे युवकों को नौकरी दिलाने की बात कोई नहीं सोचता। देखो, मुखिया जी मैं बी.ए. पास हूँ। अभी तक नौकरी नहीं मिली। पहले पेट की बात सोचूँ या देश की एकता की?"

"भइया, नौकरी करना कोई ज़रूरी तो नहीं। तुम्हारे घर-ज़मीन है। गाय-भैंसें हैं। मेहनत करो। खेती में मन नहीं लगता, तो कोई व्यापार करो। तुम्हारे पिता कह रहे थे कि लकड़ी की ठेकेदारी में भी तुम्हारा मन नहीं लगा।"

"अजी, कौन पड़े इन झंझटों में। व्यापार में तो नफा-नुकसान लगा रहता है। इससे तो नौकरी भली। बंधा-बंधाया काम और गिने हुए नगद दाम। ऐसा सुख कहाँ है?" युवक बोला।

"काम की परेशानियों से डरने वाले देश के निर्माण में क्या योगदान देंगे !" मुखिया ने व्यंग्य किया।

"सुना है, बदरीनाथ से लौटते समय उस पदयात्री दल को आप नाश्ता कराएँगे," युवक ने तैश में आकर कहा।

"क्या हर्ज है। अतिथि-सत्कार इस देश की पुरानी परम्परा है। वे लोग जनता के उपकार के लिए निकले हैं। किसी से कुछ माँग नहीं रहे। ऐसे लोगों की सेवा करना तो हर इंसान का फर्ज बनता है।"

मुखिया की बात सुनकर ताई के चेहरे पर खुशी दौड़ गई, मगर नौकरी की चिंता में खोया युवक बड़बड़ाता हुआ चला गया।

इसी बीच बस यात्रियों की टोली उस गाँव में पहुँच गई। वे पांडुकेश्वर मंदिर देखने के लिए आगे बढ़ चले। यात्री दल गाँव के रास्ते से होता हुआ पांडुकेश्वर के मंदिरों के पास पहुँचा। छोटे-छोटे, टूटे-फूटे मंदिरों को देखकर आदित्य ने कहा – "पापा, लगता है ये बहुत पुराने मंदिर हैं।"

"हाँ बेटा, इसमें से एक मंदिर योगबदरी का तथा दूसरा वासुदेव का है। ये दोनों ही भगवान विष्णु के दो स्वरूपों के नाम हैं। बहुत ही प्राचीन है। कहा जाता है कि वनवास के समय पांडव यहाँ आकर रहे थे। यही नहीं, राज्य करने के बाद भी जब पांडव बर्फ में प्राण त्यागने के लिए हिमालय की ओर गए, तब भी यहाँ आए थे। यहाँ उन्होंने तपस्या भी की थी। और हाँ, महाराजा पांडु ने यहीं अपना शरीर भी छोड़ा था।"

यात्री दल उत्सुकता से इन मंदिरों को देख रहा था। तभी वहाँ रखे घड़ियाल को देखकर आदित्य ने पापा से पूछा – "पापा, इस पर लिखा है 'बादशाह अकबर की ओर से मंदिर को भेंट'। बादशाह अकबर तो मुगल थे। वह अल्लाह को मानते थे। फिर उन्होंने मंदिर के लिए घड़ियाल क्यों भेंट दिया?"

"बेटे, मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारे और गिरजाघर – सभी भगवान

के घर हैं। भगवान के अनेक नाम हैं, रूप हैं। हम उसे अल्लाह कहें, साहिब कहें या ईसा मसीह, बात एक ही है। भगवान ऊँच-नीच, धर्म, जाति से ऊपर हैं, इसीलिए भगवान का दरबार सभी के लिए खुला है।"

उसी समय आलोक और उसके माता-पिता भी वहाँ आ गए। आलोक के पिता बोले – "भई, शर्मा जी आप इन दोनों बच्चों को अपने साथ ही रखें। आलोक मुझसे हरदम सवाल पूछता रहता है। आप हैं पत्रकार। सही ढंग से इनके सवालों के जवाब दे सकते हैं।"

"क्यों नहीं, गुप्ता जी ! आलोक को आप मेरे साथ ही रहने दें।"

"आलोक ही क्यों, हम भी आपके साथ रहेंगे। कुछ अच्छी बातें सुनेंगे, तो भला ही होगा।" आलोक की मम्मी की यह बात सुनकर सब हँसने लगे।

शर्मा जी बच्चों को उनके प्रश्नों के उत्तर देते जा रहे थे। फिर सब लोग वापस बस में आकर बैठ गए। शर्मा जी ने आलोक को कहीं खोया हुआ देखा तो पूछा – "क्या सोच रहे हो बेटे?"

"अंकल, रास्ते में जोशीमठ के बाद जब भी हमने नदी, पुल पार किए हरेक पर फौजी जवान खड़े थे। ऐसा क्यों?" आलोक ने पूछा।

"बेटे, जोशीमठ से आगे सारा क्षेत्र सेना के अधिकार में है। यह हमारे देश की सीमा का क्षेत्र है। बदरीनाथ से आगे ही भारत–चीन सीमाएँ मिलती हैं, इसीलिए हमारे जवान दिन-रात पहरे पर सावधान खड़े रहकर अपने देश की सीमाओं की रक्षा करते हैं।"

"इनकी ड्यूटी तो बड़ी सख्त होती है न पापा !" आदित्य ने कहा। सैनिकों की दुनिया हमेशा उसे सम्मोहित करती थी।

"बेटा, देश की रक्षा के लिए सावधान रहना ही पड़ता है। हम सभी देश के सैनिक हैं। सभी को अपने–अपने मोर्चे पर सावधान रहकर देश की रक्षा करनी चाहिए।"

कुछ ही घंटे की यात्रा के बाद वे बदरीनाथ की घाटी में जा पहुँचे। आदित्य का मन कौतूहल से भर उठा। बर्फ से ढकी, दूर तक फैली चोटियाँ उसने पहली बार देखी थीं। इससे पहले उसने कन्याकुमारी के विशाल समुद्र को उछलते, गरजते देखा था, किंतु हिमालय की चोटियों से फिसलकर नीचे पड़े ग्लेशियर देखकर वह चौंक उठा। उसने कभी कल्पना भी नहीं की थी, इतने बड़े हिमखंडों की ! बदरीनाथ में ठंड इतनी थी कि पानी भी अंगुलियों में चुभता था। मगर दूसरी ओर वहीं पर गर्म पानी का एक सोता था। पानी इतना गर्म कि जैसे भट्टी पर उबाला गया हो ! प्रकृति के इस अद्भुत रहस्य को देखकर वह मुग्ध हो उठा।

आदित्य ने रास्ते में पर्वत की एक चोटी भी देखी थी जहाँ हनुमान जी ने आकर तपस्या की थी। इस चोटी का नाम मारुत पर्वत है। इससे पहले आदित्य चित्रकूट भी हो आया था। वहाँ भी विंध्याचल पर्वत की एक ऊँची चोटी पर उसने हनुमान मंदिर देखा था। अपने पापा के साथ वह शिमला, मसूरी, कश्मीर और नैनीताल घूमकर आया था। हर जगह उसने अपने देश की सुंदरता की अद्भुत छटा देखी थी। पहले उसने सोचा भी न था कि अपना देश इतना सुंदर होगा !

आज बर्फ से ढकी चोटियों को देखकर वह सोच रहा था – 'सचमुच ही हिमालय पर्वतों का राजा है। राजा है, इसलिए प्रकृति ने इसके सिर पर बर्फ का सुंदर मुकुठ सजा रखा है।' सूरज की सतरंगी किरणों को छूकर झिलमिलाते बर्फ के इस मुकुट को देखकर आदित्य पुलकित हो उठा। बादलों के साथ धूप की आँख-मिचौनी से बर्फ के रंग को बदलता देखकर उसे परियों की

कहानियाँ याद आ गईं। यह दृश्य उसे जादूनगरी-सा लग रहा था। वह सोच रहा था – 'सचमुच ही मेरा देश सपनों से ज़्यादा सुंदर और परीलोक से ज्यादा मनमोहक है।'

मंदिर में दर्शन करने के बाद आलोक ने पूछा – "अंकल, शंकराचार्य जी तो केरल में पैदा हुए थे। उन्हें इतनी दूर आकर मंदिर बनवाने की क्या सूझी?"

"महापुरुष किसी एक प्रदेश, देश या धर्म-जाति के नहीं होते। सारी दुनिया उनकी अपनी है। ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए ही शंकराचार्य देश का भ्रमण करते हुए यहाँ आए। यहाँ आकर उन्होंने बर्फ की इस सुंदर धरती पर यह मंदिर बनवाकर भारत के गौरव को बढ़ाया।" शर्मा जी की बात सुनकर आलोक और आदित्य बहुत प्रसन्न हुए।

शाम को आलोक और आदित्य बाहर प्रकृति की सुंदरता को निहार रहे थे। तभी उनके मन में आया – 'क्यों न थोडी देर इधर-उधर घूम लिया जाए।' उन्हें लगा, बर्फ की चोटियाँ वहाँ से ज़्यादा दूर नहीं हैं। बस दोनों चुपचाप उधर ही चल पड़े।

चलते-चलते काफी दूर निकल आए। बस्ती के आगे बिलकुल निर्जन था। दोनों ठिठक गए। सोचने लगे – 'अब क्या किया जाए?' तब तक साँझ ढलने लगी थी। दोनों वापस लौटने लगे, मगर रास्ते में भटक गए। कुछ दूर पहुँचे थे कि एक साधु मिला। उसकी आँखें अंगारें की तरह जल रही थीं। इस ठंड में भी उसने केवल लंगोट बाँध रखा था। बच्चे उसे देखकर डर गए। उन्होंने भागना चाहा, मगर साधु ने बड़े प्यार से कहा – "भागो नहीं। तुम रास्ता भूल गए हो। चलो, मैं तुम्हें तुम्हारे माता-पिता के पास पहुँचा दूँ। वे भी तुम्हें ढूँढ़ रहे हैं। अभी मुझे मिले थे।"

बच्चों ने उसकी बात पर विश्वास कर लिया। दोनों सहमे-सहमे उसके साथ चल दिए। साधु उन्हें लेकर पर्वत की ओर चल

पड़ा। आलोक ने कहा – "इधर हमारी धर्मशाला का रास्ता नही है। कहॉ लिए जा रहे हो?"

"डरो नहीं। यह रास्ता भी उधर ही जाता है।"

दोनों डर से एक दूसरे की ओर देखने लगे। अब क्या करें? भागना चाहा, मगर साधु उन्हें कसकर पकडे था और ज़बरदस्ती खींचकर ले जा रहा था। अब तक अंधेरा घिर आया था। बच्चे भय से काँप रहे थे, पर करते क्या !

कुछ देर बाद उनके मम्मी-पापा ने उन्हें खोजा। दोनों का कहीं पता न था। कहाँ गए? इधर-उधर देखा। मंदिर, बाज़ार, आसपास सभी जगहें खोजी गई, कहीं नहीं मिले। अब क्या हो? दोनों के माता-पिता घबरा उठे। वहाँ के आदमियों को साथ ले, टार्च जलाए ये लोग उन्हें ढूँढ़ने निकले। काफी देर हो गई। आदित्य के पापा किसी दुर्घटना की आशंका से काँप उठे। उन्हें लग रहा था, कहीं दोनों नदी में न गिर पड़े हों। और भी बहुत सारी शंकाएँ उनके मन में उठ रही थीं।

आलोक के पापा भी बहुत परेशान थे। तय किया गया कि पुलिस की सहायता ली जाए।

वे एक जगह खड़े इसी चिंता में खोए थे, तभी सेना की एक जीप वहाँ आकर रुकी। उसमें से एक मेजर बाहर निकला। उसने आकर कहा – "क्या आपके बच्चे गुम हुए हैं?"

सुनकर सभी चौंक उठे। आदित्य के पापा ने तेज़ी से आगे बढकर कहा – "जी, हमारे बच्चे गुम हुए हैं। क्या आप उनके बारे में कुछ जानते हैं?"

"जीप में देखिए, दो बच्चे बेहोश पड़े हैं। मैंने इन्हें एक साधु से छुडाया है।"

आलोक और आदित्य के पिता जीप की ओर लपके। टार्च की लाइट में उन्हें देखा, चिल्ला उठे – "ये हमारे ही बच्चे हैं। क्या हुआ इन्हें?"

मेजर ने कहा – "साधु के वेश मे एक धूर्त ने कुछ सुंघाकर बेहोश कर दिया है। वह इन्हें उठाकर ले जाने की कोशिश कर रहा था। मैंने देख लिया। मुझे शक हुआ। मैंने उसे ललकारा, तो वह इन्हें छोडकर अंधेरे में कहीं गायब हो गया।"

बेहोश बच्चों को धर्मशाला में लाया गया। तुरंत डाक्टर को बुलवाया। डाक्टर ने उन्हें इंजेक्शन दिया। लगभग एक घंटे के बाद दोनों को होश आया।

अपने मम्मी–पापा को पास बैठे देख, दोनों रोते-रोते उनसे लिपट गए। फिर पूरी बात बताई। वे अब भी उस ढोंगी साधु को याद करके सहम रहे थे। आदित्य के पापा ने कहा – "डरो नहीं। अब वह तुम्हारा कुछ नहीं बिगाड़ेगा। कल मैं उसे ढूँढ़कर पुलिस के हवाले कर दूँगा।"

"मगर पापा, वह तो बड़ा ही भयानक साधु था। इस ठंड में भी सिर्फ एक लंगोट पहने था," आदित्य ने कहा।

"हाँ बेटे, साधु के वेश में ये धूर्त चरस, गाँजा पीते हैं। इसी से इन्हें ठंड नहीं लगती। तुम चिंता न करो। मैं उसे ढूँढकर ही रहूँगा।"

इससे बच्चों का साहस वापस लौट आया। उन्होंने प्रतिज्ञा की कि अब वे कभी किसी अनजान के साथ नहीं जाएँगे। दो दिन बदरीनाथ रहकर वे घर वापस लौट आए।

पाँच

बदरीनाथ यात्रा से आए आदित्य और आलोक को कई महीने बीत चुके थे। पहाड़ों पर उन्होंने जो कुछ देखा और जोशी जी से जो घटना सुनी थी, उससे दोनों बच्चों के मन में साहस का नया अंकुर पैदा हो गया था। अब वे साहसिक और जोखिम भरी कहानियाँ ढूँढ़कर पढ़ते थे। सोचते थे, हमें भी कुछ ऐसा ही करके नाम कमाना चाहिए। छोटे होते हुए भी वे बडे चतुर और सूझबूझ वाले थे। आखिर ऐसा अवसर आ ही गया।

एक बार की बात है। आदित्य अपने पापा के साथ कश्मीर गया। उसके पापा का एक मित्र कश्मीर में रहता था। होटल का व्यापार था उनका। उनके नए होटल के उद्घाटन के अवसर पर ही आदित्य अपने पापा-मम्मी के साथ वहाँ गया था।

कश्मीर में आदित्य के परिवार को अभी दो ही दिन हुए होगे कि शीत लहर शुरू हो गई। ठंड का पहला ही दौर था, ठंड के डर से सैलानियों में हलचल मच गई। रातभर जमकर बर्फ पडी थी। सुबह का हाल कुछ और ही था। ठंड के कारण वहाँ की सारी चहल-पहल मंद पड़ गई थी। आज की सुबह का अजीब आलम था। चारों ओर बर्फ ही बर्फ! पेडों की फुनगियों पर भी बर्फ के गुच्छे लटक रहे थे। उनकी शाखाएँ बर्फ मे नहाकर ऐसी लग रही थीं, जैसे चाँदनी की झील में चाँदी के वृक्ष उग आए हों। चारों ओर कोहरा ही कोहरा ! कश्मीर में जब भी बर्फ पड़नी शुरू होती है, अक्सर ऐसा ही होता है।

दूर तक नज़र दौडाने पर भी कुछ दीख न पा रहा था। कोहरे का तंबू इस तरह फैला हुआ था कि सारी कश्मीर घाटी उसमें

कैद नज़र आ रही थी। हाउस बोटों के अंदर सैलानी इस तरह छिपे बैठे थे, जैसे बया अपने घोंसले में सिर छिपाकर बैठ जाती है। बाहर मुँह निकालते ही हवा का सर्द झोंका नाक पर तेज छुरी की तरह लगता था।

सैलानियों की भीड़ के कारण ही स्टैंड पर टैक्सियों की लंबी कतार थी। वैसे कश्मीर में टैक्सियों की भरमार है। पैसा भी टैक्सी वाले जमकर लेते हैं। टैक्सियों का मीटर तो तेज भागता ही है, किसी-किसी ड्राइवर की ज़बान उससे भी तेज दौड़ती है।

आदित्य अपने पापा-मम्मी के साथ बाजार में खरीदारी के लिए निकला था। उनका विचार कल सुबह के वायुयान से वापस जाने का था।

दिन काफी चढ़ गया था। धूप कभी-कभी बादल के झरोखों से झॉक ज़रूर जाती थी, मगर नई दुल्हन की तरह वह बादल के घूँघट में मुँह छिपाए सिकुड़ी-सी बैठी थी। आदित्य बाजार की ओर चला, तो लगा, बादल की टुकड़ियॉ उसके साथ चल रही हैं। आदित्य के पापा ने कल के लिए वायुयान की सीटें बुक करवा लीं। वायुयान का समय सुबह दस बजे था।

दूसरे दिन वे लोग पाँच बजे जग गए। ऐसे मौसम में टैक्सी मिलना भी मुश्किल था। यह तो अच्छा था कि पापा के मित्र ने उन्हें जिस होटल में ठहराया था, टैक्सी-स्टैंड वहॉ से पास ही था। इसीलिए आसानी से टैक्सी आ गई। सामान रखकर वे बैठ गए। हवाई अड्डा काफी दूर था। किसी भी हालत में आधे घंटे से कम का रास्ता न था। ड्राइवर ने टैक्सी चलाई, मगर घर्र..घर्र करके वह रुक गई।

"क्यों क्या हुआ?" शर्मा जी ने ड्राइवर से पूछा।

"कुछ नहीं साहब ! इंजन ठंड खा गया है। गरमाने में थोडा

टाइम लगेगा। ठंड क्या कम पड़ रही है साहब !"

"क्या ज़्यादा देर लगेगी? कहीं जहाज न छूट जाए !" शर्मा जी के स्वर में घबराहट थी।

"आप फिक्र न करें साहब ! अभी चलती है। आप आराम से बैठिए। खिड़कियों के शीशे ठीक से बंद कर लीजिए। तेज़ रफ्तार में ठंड का एक भी झोंका आपको न सही, मेम साहब और छोटे साहब को परेशान कर सकता है।"

आदित्य बोला – "पापा, हवा का झोंका मुझे क्यों परेशान करेगा? क्या मैं उससे डरता हूँ? ड्राइवर साहब मुझे कमज़ोर समझते हैं क्या?"

सुनकर ड्राइवर मुस्कुराने लगा। बोला – "छोटे बाबू, मैं आपको कमज़ोर नहीं समझता, हवा के ये ठंडे झोंके बच्चों से कुछ ज़्यादा ही छेड़खानी करते हैं। उनके सेब से लाल-लाल गालों पर धीरे से चपत लगाकर छूमंतर हो जाते हैं। आप गले में मफलर लपेट लें तो अच्छा रहे।"

"सब कर लूँगा। आप टैक्सी तो चलाइए। काफी देर से यह घर्र-घर्र ही कर रही है," आदित्य ने खीजते हुए कहा।

"यह बात है ! लो, गरमा गई टैक्सी रानी। अब दौड़ेगी पंख लगाकर। पलक झपकते ही मैंने आपको हवाई अड्डे न पहुँचा दिया, तो मेरा नाम भी बक्शी नहीं। मगर छोटे बाबू इनाम भी देना पड़ेगा," कहते हुए ड्राइवर ने टैक्सी की रफ्तार बढ़ा दी।

सचमुच ड्राइवर कमाल का आदमी निकला। वह खटारा टैक्सी अब तेज रफ्तार से दौड़ रही थी। हवा के झोंकों को सहती, कोहरे की छाती को चीरती टैक्सी हवाई अड्डे पर जा पहुँची। ड्राइवर को किराया देकर वे लोग हवाई अड्डे के अंदर चले गए।

अंदर काफी भीड़ थी। मौसम का आतंक सभी यात्रियों के

चेहरों पर छाया हुआ था। वायुयान की इंतजारी साफ बता रही थी कि सभी अपने घरों को लौटने के लिए कितने बेचैन हैं।

धीरे-धीरे मौसम और बिगड़ने लगा। आदित्य की मम्मी घबराकर बोलीं – "मौसम तो और खराब होता जा रहा है।"

"डरो नहीं। तुम शीशों के अंदर पूरी तरह सुरक्षित हो।"

"मुझे डर है, कहीं ऐसे मौसम में उड़ान स्थगित न हो जाए।"

"हाँ, यह तो सम्भव है। मगर अभी तो उड़ान में देर है। तब तक मौसम साफ भी हो सकता है," शर्मा जी ने कहा।

तीनों कुर्सियों पर बैठ गए। आदित्य के हाथ में एक उपन्यास था। वह उसी में खोया था। उन्हीं के पास एक विदेशी महिला बैठी थी। वह अपनी नीली-नीली गोल आँखों से इधर-उधर देख रही थी। उसी के साथ दाढ़ीवाला एक विदेशी पुरुष बैठा था। वह महिला का साथी लग रहा था। मगर वह था बिलकुल चुपचाप अपने ध्यान में केंद्रित। विदेशी महिला बार-बार उसकी ओर देख रही थी और वह उसे अनदेखा कर रहा था।

आदित्य ने उपन्यास से आँख उठाकर उधर देखा। एक क्षण वह उसे देखता रहा। आदित्य को वह महिला अपने उपन्यास की नायिका-सी लगी। अभी-अभी उसके उपन्यास का नायक ऐसी ही नीली आँखों वाली किसी महिला को घोड़े पर बैठाकर सरपट दौड़ गया था। फिर आदित्य ने दाढ़ीवाले की ओर देखा। उसका चेहरा भी उसे उपन्यास के एक पात्र से मिलता-जुलता लगा।

तभी शर्मा जी ने पत्नी से कहा – "अपनी नीलम की अंगूठी अंगुली से उतारकर पर्स में रख लो। यह गले की चेन भी। इसमें जो हीरे जडा लॉकेट है, उसकी कीमत बीस हज़ार से कम नहीं। इस भीड़ में कोई ठग भी हो सकता है। सावधान रहना चाहिए।" सुधा ने तुरंत गले की चेन और अंगूठी उतारकर पर्स में रख ली।

जिस समय वह ये चीजें रख रही थी, विदेशी महिला बड़े गौर से उन्हें देख रही थी। सुधा का ध्यान उस ओर नहीं था। मगर आदित्य बराबर नीली आँखों वाली महिला को उत्सुकता से देखे जा रहा था।

कोहरा छितरा गया था। कुछ ही देर में सूरज की किरण दूधिया बर्फ के साथ छेड़खानी करती नज़र आने लगी। उड़ान का समय पास ही आ गया, मगर अभी तक उस बारे में कोई उद्घोषणा नहीं हुई थी।

बहुत से यात्री कॉफी के काउंटर के पास खडे कॉफी पी रहे थे। उनमें से अधिकांश वे ही थे, जिनकी उडान का समय अभी दूर था। कॉफी पीने की इच्छा आदित्य के पापा-मम्मी की भी थी। किंतु उड़ान का समय हो जाने के कारण वे कॉफी पीने की बात टाल गए थे। तभी घोषणा हुई – 'कृपया ध्यान दीजिए। हमें खेद है, मौसम ठीक न होने के कारण अमृतसर होकर दिल्ली जाने वाली उड़ान अब लगभग दो घंटे देर से जाएगी। असुविधा के लिए यात्रियों से क्षमा चाहते हैं।'

"चलो, अब कॉफी तो आराम से पी जा सकती है। क्यों, क्या विचार है?" शर्मा जी ने सुधा से पूछा।

"विचार तो बुरा नहीं। समय भी काफी है। कॉफी के साथ कुछ खाया-पिया भी जा सकता है। सुबह नाश्ता भी ढंग से नहीं किया।" कहकर दोनों उठ चले। सुधा के हाथ में पर्स था। एक छोटी अटैची आदित्य के पास रखी हुई थी। बाकी सामान पहले ही बुक हो चुका था। दोनों कॉफी की दुकान पर पहुँचे। उन्होंने देखा, वह महिला भी उन्हीं के पास आकर खड़ी हो गई। उसके हाथ में सौ रुपए का नोट था। सुधा से अंग्रेज़ी में बोली – "क्या आपके पास रेज़गारी है। कॉफी वाले के पास नहीं है।"

सुधा के पास रेजगारी थी, मगर इतनी भीड़ में वह पर्स

खोलना नहीं चाहती थी। बोली – "रेज़गारी तो नहीं, चलिए आपका कूपन मैं ले लेती हूँ। आप हमारे साथ कॉफी पीजिए। हमें खुशी होगी। अपने साथी को भी बुला लें।"

"थैंक्यू...थैंक्यू," कहते हुए उसने बात मान ली। साथी को बुलाने की बात पर बोली – "मेरा कोई साथी नहीं। मैं अकेली हूँ।" सुधा ने उत्सुकता से उधर देखा, जहाँ अभी कुछ देर पहले दोनों बैठे थे। वह दाढ़ीवाला अब वहाँ नज़र नहीं आ रहा था। शायद उठकर कहीं चला गया था।

उस महिला ने अपना परिचय देते हुए कहा – "मैं कैनेडियन हूँ। नेहरू विश्वविद्यालय में भारतीय कला पर रिसर्च करने भारत आई हुई हूँ।" उसकी बातें बड़ी लच्छेदार और मीठी थीं। शर्मा जी उससे बहुत प्रभावित हुए। शर्मा जी ने जल्दी कॉफी समाप्त की और बोले – "आप दोनों उधर बैठकर आराम से कॉफी पीजिए, मैं आदित्य के पास जाता हूँ।"

"मेरा बैग भी वहाँ रखा है। आपका बच्चा बड़ा ही समझदार है," महिला बोली।

शर्मा जी चले आए। उनके आने पर आदित्य आइसक्रीम लेने चला गया। सुधा उस महिला के साथ आराम से बैठी कॉफी पी रही थी।

तभी उस महिला ने कहा – "मुझे इलायची बहुत अच्छी लगती है। यहाँ तो मिलेगी नहीं। आप तो खाती नहीं होंगी?" दरअसल कुछ देर पहले उसने शर्मा जी को इलायची खाते देख लिया था।

सुधा सरलता से बोली – "इलायची हमारे पास है। चलिए, आपको खिला देती हूँ।"

"अरे छोड़ो। आराम से बैठते हैं। आपके साथ बातचीत करने में मज़ा आ रहा है। चलेंगे। अभी उड़ान में देर है।"

"नहीं, नहीं आप ठहरें। मैं अभी इलायची लेकर आती हूँ," कहती हुई सुधा वहाँ से चली आई। वह बैग से इलायची निकालने लगी तो शर्मा जी ने कहा – "क्यों, चली क्यों आई? वह महिला कहाँ है?"

"उसी के लिए इलायची लेने आई हूँ। बहुत ही अच्छी महिला है। एकदम भोली-भाली।"

"तुम्हारा पर्स कहाँ है?" शर्मा जी ने पूछा।

"उसी के पास छोड़ आई हूँ। कहीं भागे थोड़ी जा रही है। उसका बैग भी यहाँ रखा हुआ है। जाना भी उसे हमारे साथ ही है।" सुधा निश्चिंत होकर बोली।

"कमाल कर दिया। पर्स क्यों छोड़ आईं। उसमें अंगूठी और चेन रखी है। पाँच हज़ार रुपये भी हैं। इतनी जल्दी किसी का विश्वास ठीक नहीं। जाओ, जल्दी जाओ।" शर्मा जी ने कहा।

सुनकर सुधा घबरा गई। वह भागी-भागी गई। देखा, वहाँ न तो महिला थी, न ही पर्स। यह देखकर सुधा का चेहरा सफेद पड़ गया। पति से आकर बोली – "वह तो पर्स लेकर गायब हो गई।"

पर्स गायब होने की बात से शर्मा जी विचलित हो गए। उन्होंने महिला को इधर-उधर ढूँढ़ा, मगर कहीं दिखाई न दी। और कोई उपाय न देख, उन्होंने तुरंत पुलिस को सूचना दी। पुलिस ने आकर सबसे पहले महिला का बैग टटोला। उसमें किताबें भरी थीं। किताबों के बीच में विदेशी मुद्रा का एक बंडल था। पुलिस ने बैग अपने कब्ज़े में ले लिया। पुलिस इंस्पैक्टर शर्मा जी से बोला – "श्रीमान जी, इसका क्या सबूत है कि यह बैग उस महिला का है। यह भी क्या पता, कोई महिला थी भी या नहीं। मुझे तो यह सब कहानी लगती है। यह बैग भी आपका ही है। आप इतनी विदेशी मुद्रा कहाँ से लाए? इसे कहाँ ले जा रहे हैं?"

"मैं एक शरीफ आदमी हूँ। मेरा इतना नुकसान हो गया। पत्नी के पर्स में नीलम की अंगूठी, लॉकेट वाली एक कीमती चेन और पाँच हज़ार रुपये थे। आप अपराधी को ढूँढ़ने के बजाए, उल्टा हमें ही फँसा रहे हैं?" शर्मा जी बोले।

"हमें कल से ही एक विदेशी जासूस की तलाश है। उसके पास सेना के कुछ ठिकानों के नक्शे है। आप मुझे उसी के साथी लगते हैं", इंस्पैक्टर बोला।

"अरे, यह वही दाढ़ीवाला होगा। अभी कुछ देर पहले यहाँ बैठा था। वह भी गायब है। मैं ठीक कह रहा हूँ, इंस्पैक्टर साहब ! उन्हें तलाश कीजिए। बैग वे ही छोड़ गए हैं। इस झंझट में मेरा जहाज़ ही छूट जाएगा।"

"जहाज़ तो अब हाथ नहीं आएगा। आपको हमारे साथ पुलिस स्टेशन चलना होगा। इतनी आसानी से हम आपको छोड़ने वाले नहीं," इंस्पैक्टर ने कहा।

शर्मा जी बड़े परेशान थे। सुधा रुआँसी हो गई थी। तभी उन्हें आदित्य का ध्यान आया। वह भी वहाँ नहीं था। सुधा घबराई। बोली – "हमारा बेटा कहाँ गया? वह जासूस उसे तो बहलाकर नहीं ले गया?"

खोजने पर भी आदित्य नहीं मिला। सुधा रोने लगी। इंस्पैक्टर बोला – "मैडम, अब यह नाटक छोड़िए। आपके साथ कोई बेटा नहीं था। यह नाटक रचकर हमें धोखा न दें।"

"अपने मित्र को फोन कर दो। पर्स गया तो गया, मगर बेटा तो मिल जाए।" सुधा की रुलाई छूटने लगी।

उधर कुछ और ही गुल खिल रहा था। दोनों विदेशी जासूस हवाई अड्डे के पास ही छिपे थे। उन्होंने जान-बूझकर शर्मा जी को फँसाया था। वे जानते थे, विदेशी मुद्रा के चक्कर में पुलिस

का ध्यान बॅट जाएगा। उसी बीच वे यहॉ से भाग जाएँगे। अब दोनों अपने अगले कार्यक्रम पर विचार करने लगे। दाढ़ीवाले ने महिला से कहा – "तुमने काफी बडे माल पर हाथ साफ किया। मैं तुम्हारी चतुराई का कायल हूँ। इन्हें दिल्ली ले जाकर बेच देंगे। अच्छी रकम मिलेगी।"

महिला मुस्कुराने लगी। कुछ सोचकर दाढीवाला कहने लगा – "अब हमें अपना वेश बदलना चाहिए। बिना वेश बदले काम चलने वाला नहीं है। वेश क्या, नाम भी बदलना होगा।"

"नाम तो पहले ही बदल लिए हैं। ये टिकट नए नाम से ही तो खरीदे हैं," महिला बोली।

"ओह, यह तो मैं भूल ही गया। तुमने फिर मात दे दी। अच्छा यह लो," कहते हुए उसने अपनी नकली दाढ़ी और बड़े-बड़े बाल हटाकर बैग में रख लिए। अब उसका चेहरा बिलकुल पहचाना नहीं जा रहा था।

इसके बाद महिला ने फ्राक के ऊपर केसरिया रंग का तहमद बॉध लिया। एक ढीला-ढाला कुरता पहनकर गले में रुद्राक्ष की मालाएँ डाल लीं। अपने चेहरे का मेकअप भी पूरा बदल लिया, ताकि वह पहले वाली महिला के रूप में पहचानी न जा सके। इसके बाद उसने नकली बालों का विग पहना। अधपके बालों वाला विग पहनने के बाद वह जवान से एकदम अधेड लगने लगी थी।

इसके बाद दोनों ने मुस्कुराकर एक दूसरे की ओर देखा। महिला बोली – "अब हम आसानी से हवाई यात्रा कर सकते है। हवाई अड्डे में वह महिला अब हमें पहचान नहीं पाएगी।"

पुरुष ने कहा – "मेरी राय है, तुम आज यहीं ठहरो। अपना सामान मुझे दे दो। मेरे पास सेना के ठिकानों के नक्शे हैं। मैं उन्हें लेकर सुरक्षित पहुँच जाऊँगा, जो बहुत जरूरी है। तुम्हें साथ

देखकर पुलिस वालों को शक हो सकता है। दोनों का साथ रहना ठीक नहीं।"

"यह भी ठीक है। मैं कल की उड़ान से चली जाऊँगी। लो, सामान ले जाओ। मगर इस टिकट का क्या होगा?"

"अरे, छोड़ो भी। काफी माल हाथ लगा है। इतना लालच अच्छा नहीं। होटल में चली जाओ।"

"अच्छा, मैं चलती हूँ।"

"नहीं, मैं चलता हूँ। तुम अभी यहीं ठहरो। हवाई जहाज़ उड़ान भर ले, तभी यहाँ से जाना। मैं चलता हूँ। उड़ान का समय हो रहा है।"

कुछ दूर एक झाड़ी के पीछे खड़ा आदित्य उनकी सब बातें सुन रहा था। जब यह महिला उसकी मम्मी का पर्स उठाकर भागी थी, तो आदित्य उसके पीछे लग गया था। वह विदेशी हवाई अड्डे की ओर चलने लगा तो आदित्य तेज़ी से पलटा और उससे पहले ही मम्मी-पापा के पास आ गया।

उसने मम्मी-पापा को पुलिस से घिरा पाया। आदित्य को देखकर सुधा चिल्लाई – "वह आ गया मेरा बेटा !" कहकर आदित्य को बाँहों में भर लिया।

इंस्पैक्टर देखकर चकित था। तभी आदित्य बोला – "मम्मी, मैं उस महिला के पीछे गया था, जो आपका पर्स उठाकर भाग गई थी।"

"कहाँ है वह महिला?" पापा ने पूछा।

"अभी बताता हूँ। बताता नहीं, पकड़वाता हूँ। महिला तो नहीं, उसका साथी दढ़ियल अपना नया वेश बदलकर आ रहा है। वह

उसी का साथी था मम्मी ! लगता है, बहुत बड़ा जासूस है। मैंने उसकी सारी बातें सुन ली हैं।"

आदित्य की बात सुनकर पुलिस चौकन्नी हो गई। इंस्पैक्टर ने प्यार से पूछा – "बेटे, कहाँ है वह आदमी?"

"वह देखिए, अंकल। बड़ी-बड़ी मूँछों वाला... यही है। यह इसकी नकली मूँछें हैं। अभी मेरे सामने लगाई हैं। इसके नीले वाले बैग में मेरी मम्मी का पर्स रखा हुआ है।"

वह विदेशी बड़ी सतर्क नज़रों से इधर-उधर देखता, हवाई अड्डे में दाखिल हुआ। पुलिस को वहाँ देख, वह समझ गया था, पुलिस विदेशी मुद्रा के चक्कर में उन लोगों से पूछताछ कर रही है। अपनी चालाकी पर वह मन ही मन मुस्कुराया। फिर निर्भीक होकर एक तरफ जाकर बैठ गया।

पुलिस इंस्पैक्टर ने भी कोई जल्दी नहीं की। सिपाही उसके चारों ओर फैल गए थे। अब इंस्पैक्टर स्वयं ही उसके पास आया। बोला – "जरा अपना पासपोर्ट दिखाइए। हमें किसी विदेशी नागरिक की तलाश है।"

"ज़रूर देखिए। मैं आजकल वृंदावन में रहता हूँ। वहीं जा रहा हूँ।" इतना कहकर उसने पासपोर्ट दिखा दिया। उस पर उसका नाम जे. कुक लिखा था। अमरीका के नागरिक के रूप में उसका पासपोर्ट बना था। पासपोर्ट पर चित्र भी वैसी शक्ल का लगा था, जैसी शक्ल उसकी इस समय थी।

"लीजिए, धन्यवाद !" कहते हुए इंस्पैक्टर ने एक झटके से उसकी एक तरफ की मूँछ खींची। नकली मूँछ एक झटके में इंस्पैक्टर के हाथ में थी। तभी इंस्पैक्टर ने इशारा किया। पास खड़े सिपाहियों ने उसे पकड लिया। बैग खोला गया, तो आदित्य की मम्मी का पर्स निकल आया। इंस्पैक्टर ने शर्मा जी से कहा –

"आपके बच्चे ने इसे पकडवाया है, इसके लिए पुलिस आपकी आभारी है। मगर आपको सबूत देना होगा कि यह पर्स आपकी पत्नी का ही है।"

"अब भी सबूत चाहिए आपको?" शर्मा जी ने पूछा।

"लाचारी है। कानून यही कहता है।"

तभी सुधा को अचानक जैसे कुछ याद आया। बोली – "लाइए, पर्स मुझे दीजिए, सबूत देती हूँ।"

इंस्पैक्टर ने पर्स दे दिया। पर्स खोलकर सुधा ने कहा – "देखिए, यह रही मेरी अंगूठी और चेन। और यह रहा मेरा परिचय–पत्र।"

इसके बाद उस आदमी का बैग देखा गया। उसके अंदर अलग-अलग नामों से कई पासपोर्ट मिले। वे नक्शे भी मिल गए, जिनकी पुलिस को तलाश थी। अंत में एक छोटी डायरी पढ़कर इंस्पैक्टर चौंक पड़ा। "अरे यह तो जेम्स है, एक बड़े अंतरराष्ट्रीय गैंग का आदमी ! इसकी हमें बहुत दिन से तलाश थी।"

"अंकल, अभी आपको इसकी साथी भी मिल सकती है। वह बाहर छिपी है। हवाई जहाज के उड़ने का इंतज़ार कर रही है।"

"अच्छा !" कहते हुए इंस्पैक्टर दो सिपाहियों को साथ लेकर बाहर की ओर लपका। कुछ ही देर में वह महिला भी पकड ली गई।

तभी आवाज़ गूँजी – "कृपया ध्यान दें। अमृतसर जाने वाली उड़ान तैयार है।"

कुछ ही देर में पुलिस की जीपों का ताँता लग गया। पुलिस अधीक्षक ने आकर आदित्य को प्यार किया। फिर कहा – "बेटे, तुमने जो कर दिखाया, उसे हम भी नहीं कर पा रहे थे। तुमने एक बड़े जासूस को पकड़वाकर देश को किसी होने वाले बड़े

संकट से बचा लिया। अब इस दल के दूसरे आदमी भी पकड़े जाएँगे।" कहते हुए पुलिस अधीक्षक ने आदित्य की पीठ थपथपाई – "मैं राष्ट्रपति पुरस्कार के लिए तुम्हारा नाम भेजूँगा।"

आदित्य मुस्कुरा दिया। उड़ान का समय हो गया था। हवाई जहाज़ उड़ा तो हवाई अड्डे पर बहुत से हाथ हवा में झूल रहे थे। वे सभी आदित्य को विदा दे रहे थे।

छह

हवाई जहाज़ अपनी ऊँचाई पर पहुँचा, तो सभी यात्री अपनी-अपनी बैल्ट खोलकर आराम से बैठ गए। आदित्य बैठा हुआ कुछ सोच रहा था, तभी विमान परिचारिका ने आकर कहा – "क्या आप ही आदित्य हैं?"

"हाँ, आंटी ! मेरा ही नाम आदित्य है।"

"आप इस समय क्या पीना चाहेंगे?" विमान परिचारिका ने पूछा।

"आंटी, हम जूस पिएँगे। क्या आपके पास है?"

"क्यों नहीं, हमारे कैप्टेन, पायलेट का कहना है कि आदित्य इस उडान में हमारे विशेष अतिथि हैं। उन्हें खाने-पीने की जिस चीज़ की इच्छा हो, उन्हें दी जाए। मैं अभी जूस लेकर आती हूँ।"

"आंटी, क्या मैं कैप्टेन अंकल से मिल सकता हूँ? मैं देखना चाहता हूँ कि कैप्टेन अंकल जहाज़ कैसे चलाते हैं?"

"मैं पूछकर बताती हूँ। जूस भी लेकर आती हूँ।"

इसके बाद विमान परिचारिका ने जूस लाकर आदित्य को दिया। अपने बेटे का इतना सत्कार होते देख, मम्मी-पापा गद्‌गद् हो रहे थे। विमान परिचारिका आदित्य को कैप्टेन के कमरे तक ले गई। वहाँ कैप्टेन ने आदित्य से हाथ मिलाया। उसे समझाया कि हवाई जहाज़ को दौड़ाने, उतारने और उड़ाने के लिए क्या-क्या किया जाता है। यह सब देखकर आदित्य बहुत ही खुश हुआ। वह फिर अपनी सीट पर आकर बैठ गया।

घोषणा हुई – 'यात्री अपनी-अपनी बैल्ट बाँध लें। अमृतसर

आ गया है।' कुछ देर बाद ही जहाज़ हवाई पट्टी पर उतर गया।

हवाई जहाज के आने से पहले ही हवाई अड्डे पर आदित्य के शानदार कारनामे की खबर पहुँच गई थी। हवाई जहाज का दरवाजा खुलते ही यात्री नीचे उतरने लगे। आदित्य दरवाज़े पर आया, तो विमान परिचारिका ने उसकी मुट्ठी में टाफियाँ भरते हुए प्यार से कहा – "मास्टर आदित्य, हम फिर इस विमान में आपका इंतज़ार करेंगे।"

"ज़रूर आऊँगा आंटी ! आप अपनी नीलम की अंगूठी किसी को पर्स में रखकर दे दीजिएगा। उसे ढूँढने के लिए मैं आपसे मिलने आऊँगा !"

बेटे की बात सुनकर मम्मी-पापा हँसने लगे। विमान परिचारिका ने मुस्कुराकर उसे विदा किया। आदित्य सीढ़ियों से उतर नीचे आया, तो विमान चालक दल की ओर से उसे गुलदस्ता भेंट किया गया।

हवाई अड्डे के बाहर आदित्य की मौसी और मौसा उन्हें लेने आए थे। उन्होंने आदित्य की बहादुरी की बात सुनी, तो मौसी ने उसकी पीठ थपथपाते हुए कहा – "तुमने बहुत अच्छा काम किया है बेटा ! मेरी ओर से तुम्हें एक कैमरा भेंट।"

"मैं उसका क्या करूँगा मौसी जी !"

"जहाँ भी जाओ, फोटो खीचना। तुम्हें पहाड़ों के, झरनों और समुद्र के, चहचहाते पक्षियों और दहाड़ते हुए शेरों के फोटो बहुत पसंद है न?"

"हैं तो ! मगर मुझे आपका और मौसा जी का फोटो भी बहुत अच्छा लगता है। आप दोनों घोड़ों पर बैठकर पहाड़ी पर चढ़ रहे हैं... हमारे ड्राइंगरूम में रखा है आपका वह फोटो। क्यों, है न मम्मी?"

सुनकर उसके मौसा जी हँसने लगे। फिर बोले – "तुम चाहो, तो मैं एक घोडा भी खरीदकर तुम्हें भेंट कर सकता हूँ।"

"मगर घुड़साल कहाँ से आएगी मौसा जी?" इस बार आदित्य की बात सुनकर सभी ने ज़ोर का ठहाका लगाया।

आदित्य अमृतसर में दो दिन मौसा जी के यहाँ रहा। जब वे वापस चलने लगे, तो मौसी जी ने सचमुच ही एक कैमरा उसे भेंट में दिया। मौसा जी के यहाँ से अपने घर वापस आने पर सबसे पहले आदित्य अपने मित्र आलोक से मिला। आलोक को उसने सारी बात बताई कि किस तरह उसने जासूस को पकड़वाया। उसकी बात सुनकर आलोक को भी बडा रोमांच हुआ। वह भी कोई ऐसा काम करना चाहता था, जिससे उसका भी नाम हो। लोग उसकी भी बड़ाई करें। उसकी सराहना करें। उसने मन में कई काम सोचे, मगर उनमें से कोई भी काम आदित्य की बराबरी का नहीं लगा। वह चाहता था, कोई ऐसा काम करे, जिससे लोग उसे भी मान जाएँ।

शाम को खेलने के बाद आदित्य घर लौटा, तो उसे पता चला कि गाँव से उसके ताऊ जी की चिट्ठी आई है। उसके ताऊ जी का बड़ा लड़का, जिसे आदित्य दीपक भइया कहकर पुकारता था, इंजीनियरिंग में पास हो गया था। उसी खुशी में ताऊ जी ने एक दावत का आयोजन किया था। उसी मे उनको बुलाया गया था।

आदित्य की मम्मी ने उसके पापा से कहा – "अभी कश्मीर से लौटे हैं। मैं तो बुरी तरह थक गई हूँ। गाँव न जाएँ, तो क्या हर्ज है! तुम चिट्ठी लिखकर भाई साहब से क्षमा माँग लेना।"

"नहीं, सुधा, ऐसा नहीं हो सकता। तुम तो जानती हो बडे भइया मुझे कितना प्यार करते हैं ! उन्होंने मुझे बेटे की तरह

पाला है। तुम्हें याद है, जब मेरी नौकरी लगी थी, तब भी भइया ने गाँव वालों को दावत दी थी। मैं नहीं जाऊँगा, तो उन्हें बुरा लगेगा। दीपक तुम्हें कितना मानता है। तुम नहीं जाओगी, तो उसे भी अच्छा नहीं लगेगा। हमे वहाँ जाना ही चाहिए।"

आदित्य को और क्या चाहिए! उसे चाहिए सैर-सपाटा और नई-नई बातों की जानकारी। उस रात ताऊ जी के यहाँ जाने की खुशी में वह गाँव के सपने देखता रहा।

सात

अगले दिन आदित्य गाँव पहुँच गया। कोलाहल से दूर गॉव के सादगी भरे वातावरण में उसे बहुत ही सूना-सूना सा लग रहा था, किंतु फिर भी उसने गॉव की हर चीज़ को रुचि से देखने और समझने की कोशिश की।

आज के गॉव नई रोशनी के उजाले से परिचित हैं। वहाँ सड़कें भी हैं और बिजली भी। स्कूल और कॉलेज तक गॉवों में पहुँच गए हैं। रेडियो गॉव के लिए एक आम बात है। बहुत से गाँवों में तो टेलीविजन भी हैं। मगर गॉवों की मिट्टी में अब पहले की तरह सद्भाव की महक नहीं आती। फिर भी भाईचारे की जड़ अभी उखड़ी नहीं है। उन्हें पानी देने वाले मिलें, तो वे जड़ें फिर फल-फूल सकती है।

रामधन इस गाँव का एक किसान है। खाता-पीता और हँसमुख। गाँव का सरपंच भी वही है। बाल-बच्चे खेत में काम करने लायक हो गए, तो वह अपने को बूढा समझने लगा। वह अधेड़ ज़रूर है, मगर बूढ़ा नहीं। वह अपने को बूढ़ा कहता है, तो घरवाली चिढ़ती है।

आज सुबह रामधन देर से सोकर उठा। उठते ही घरवाली को आवाज़ देता हुआ बोला – "अरे, चम्पो की माँ। मैंने कहा, कहाँ चली गई। ज़रा, मेरी भी सुध ले-ले भागवान !"

"तुम्हे क्या हो गया है जी, जो तुम्हारी सुध लूँ। अच्छे-भले हो। दिन-रात गाँव की पड़ी रहती है। फिर तुम ही मेरी कौन सुध लेते हो, जो तुम्हारी फिक्र करूँ।" चम्पो की माँ इमरती ने भिनभिनाते हुए कहा। तभी रामधन को अचानक कोई बात याद

आ गई। वह फुर्ती से उठा। बोला – " मैं तो भूल ही गया था पर तूने भी याद नहीं दिलाया कि आज अपने शर्मा जी के घर दावत है। उससे पहले पंचायत भी है। मुझे वहाँ जाना है। जल्दी नहा-धोकर निपट लूँ। ज़रा मेरा नया कुरता-धोती और पगडी निकाल देना।"

"जाओ, नहा-धोकर तो आओ। कपड़े भी मिल जाएँगे," कहती हुई इमरती अपने काम में लग गई।

नहा-धोकर रामधन ने साफ कपड़े पहने, पगड़ी बाँधी और कपड़ों पर निगाह डालता, बड़ी शान से घर से निकला। रास्ते में तीरथराम मिल गया। उसे देखकर रामधन ठिठका।

"कहो, भई तीरथराम ! सुबह-सुबह कहाँ का दौरा लगा आए?" रामधन ने पूछा।

"दौरा कहाँ का सरपंच साहब ! किसान कहाँ जाएगा, अपने खेत तक। तुम कहाँ जा रहे हो?"

"आज पंचायत है। तुम भी तो सदस्य हो। क्या आज की पंचायत की खबर नहीं मिली?" रामधन ने पूछा।

"मिली क्यों नहीं। चलो, अच्छा किया, याद दिला दिया। मैं अभी आता हूँ। ज़रा कुछ खा-पी तो आऊँ।" तीरथराम बोला।

"खा-पीकर क्या करोगे ! क्या शर्मा जी के घर का न्यौता नहीं मिला?" रामधन ने बात आगे बढ़ाई।

"अरे, सचमुच ! वह तो मैं भूल ही गया। आज तो लड्डुओं की दावत भरपेट होगी। मगर मैंने घरवाली से नहीं कहा। उसे बताकर आता हूँ।"

इसके बाद बातें करते-करते रामधन और तीरथराम गाँव के गलियारे में आ गए। रास्ते में उन्हें गाँव का एक नवयुवक धीरजसिंह मिला। रामधन को देखते ही धीरजसिंह ने राम-राम की।

"क्यों, धीरज पहलवान, कहाँ चले?" रामधन ने पूछा।

"कहीं नहीं काका जी ! सुबह-सुबह दो भले आदमी मिल गए। समझो, आज का दिन भला बीतेगा। तीरथराम काका बड़े खुश नज़र आ रहे हैं। ऐसी क्या बात है?"

तीरथराम ने धीरजसिंह के कंधे पर हाथ रखते हुए कहा – "बात क्या होगी। सरपंच साहब कह रहे हैं कि आज शहरों की चमक-दमक से गाँवों का महत्व घट गया है। मैं कहता हूँ कि इस देश की अस्सी प्रतिशत जनता गाँवों में रहती है। शहर भी गाँवों की बदौलत ही फल-फूल रहे हैं। अब तुम ही बताओ, गाँवों का महत्व घटा या बढ़ा?"

धीरजसिंह ने गर्दन को एक तरफ झटका दिया। लगा, जैसे वह प्रश्न के उत्तर को हवा में से पकड़ने का प्रयत्न कर रहा है। फिर बोला – "बात दोनों की ठीक है, मगर ज़्यादा ठीक तीरथराम काका ही कह रहे हैं।"

"वह कैसे?" रामधन ने पूछा।

"सरपंच साहब, शहर भले ही सुख-साधनों से भरे हों, मगर भारत की आत्मा तो गाँवों में ही बसती है।"

"भइया ! तुम जबसे पाठशाला के हेड मास्टर साहब की सोहबत में रहने लगे हो, बड़े ज्ञानी बन गए हो। ज़रा खोलकर समझाओ," रामधन बोला।

"बात सीधी है सरपंच साहब ! गाँव अन्न न उगाए, तो शहर खाए क्या? जैसे आत्मा से शरीर जीवित रहता है, बिलकुल उसी तरह गाँवों के अन्न पर शहर जीवित हैं।"

"मान गए पहलवान ! भूरी भैंस का दूध पीते-पीते तुमने ज्ञान भी पा लिया है, मगर एक बात बताओ, गाँव की आत्मा में आज घुन क्यों लगा है? आए दिन की मुकदमेबाज़ियों और झगड़े-फसादों

ने गाँवों को तबाह कर दिया है। एक-दूसरे के लिए खून-पसीना बहाने वाले लोग गाँव में अब कहाँ रह गए हैं?" रामधन ने अपनी बात पर ज़ोर देते हुए कहा।

"बात तो आपकी सोलह आने ठीक है सरपंच साहब ! अगर ऐसे ही चलता रहा, तो गाँव उजड़ जाएँगे। अभी भी हमारे गाँव के पाँच-दस लोग रोज़ अदालतों के चक्कर काटते रहते हैं। अगर ये झगडे न हों या हम झगडों को आपस में बैठकर निपटा लें, तो अदालतों में पैसा बरबाद नहीं होगा।"

"मैं एक बात पूछूँ?" धीरजसिंह ने कहा, "अदालतों में कौन-सा न्याय मिलता है। पैसे खर्च करो। अच्छा वकील करो तो अपराधी भी छूट जाता है। मुकदमों के अम्बार लगे हैं। वर्षों तक मुकदमों की तारीखें चलती रहती हैं। काटते रहो अदालतों के चक्कर !"

"यह सब क्यों है? क्या है इस बुराई की जड़ में? कभी यह भी सोचा है?" रामधन ने कहा।

"नहीं सोचा तो तुम बता दो," तीरथराम ने कहा।

"घमंड ने हमें कहीं का नहीं छोड़ा। अपने से दूसरे को छोटा समझना हमारा स्वभाव बन गया है। देखा नहीं, परसों ठाकुर रामपाल ने करीम बढ़ई के लड़के को छोटी-सी बात पर खूब पीटा। भैस खेत में चली गई थी, तो लड़के को डॉट देता। यह नासमझी ही झगड़ा और मनमुटाव पैदा कर देती है।"

"आज पंचायत में यही मामला उठेगा। मगर रामपाल से कौन झगड़ा मोल ले?" तीरथराम ने कहा।

"सुनो, तीरथराम ! बात की सफाई करनी है। गाँव में भाईचारा लाना है, तो एक न एक दिन सच्ची बात कहनी ही पडेगी। मैं

तो वैसे भी सरपंच हूँ। मुझे किसी का पक्ष नहीं लेना चाहिए।"

"ठीक है, सरपंच साहब, मैं भी आपके साथ हूँ। आज दूध का दूध और पानी का पानी हो जाना ही चाहिए," धीरजसिंह ने कहा।

"ऐसा ही होगा पहलवान !" रामधन के स्वर में दृढता थी।

अभी वे लोग बातें कर ही रहे थे, तभी सामने से रामधन का लड़का विजयपाल आता दिखाई दिया। वह बहुत ही खुश नजर आ रहा था। धीरजसिंह ने उसे टोकते हुए कहा – "क्यों विजयपाल, क्या आज खेत में खज़ाना दबा मिल गया? बड़े खुश नज़र आ रहे हो! क्या बात है ऐसी?"

"अरे, अपने पंडित जी के छोटे भाई ताँगे में बैठे इधर ही आ रहे हैं। उन्हीं से मिलकर आ रहा हूँ।"

"अच्छा, अपना नगेन्द्र आ रहा है। सुना है, शहर के किसी बड़े समाचार-पत्र में बडे पद पर है। उसकी पत्नी भी बहुत पढ़ी-लिखी है। दावत में शामिल होने जा रहे होंगे," तीरथराम ने कहा।

"मैं तो उन्हें मान गया ! मुझे देखते ही ताँगे से उतरे। तुरंत बाँहों में भर लिया। बोले – 'कैसे हो विजयपाल? सरपंच काका कैसे हैं?' अब आप ही बताइए, कहाँ उनका कीमती सूट और कहाँ मेरे मैले कपड़े ! मैंने कहा – 'भइया जी, मुझे छूकर तो आपके कपड़े खराब हो गए।' जानते हो, उन्होंने मेरी बात सुनकर क्या कहा?"

"क्या कहा?" धीरजसिंह ने उत्सुकता से पूछा।

"प्यार से मेरे गाल पर चपत लगाते हुए बोले –'अरे, पगले ! छोटे भाई को गले लगाते हुए भी क्या कपडे खराब हुआ करते हैं? क्या कपड़े तुझसे अच्छे हैं?' इस बात से मैं तो पानी-पानी हो गया।"

अपने बेटे की बात सुनकर रामधन की ऑखों में खुशी के आँसू छलक आए। बोला – "भले लोगों की अपनी ही शान होती है। हमारे शर्मा जी जितने भले हैं, उनका भाई उनसे भी आगे है। शर्मा जी का लडका कहने को इंजीनियर हो गया, मगर मजाल क्या जो ऑखें ऊँची करे। कल ही मिला था। हाथ जोड़कर नमस्ते की और सिर झुकाकर अपने रास्ते पर चला गया।"

"'होनहार बिरवान के होत चीकने पात' वाली कहावत यूँ ही नहीं कही गई सरपंच साहब ! मेरी इच्छा है, आज नगेन्द्र भाई को भी पंचायत में बुलाया जाए। पढ़ा-लिखा विद्वान है। कुछ हमारे भले की ही कहेगा। उसकी बातें सुनकर गाँव वाले ज़रूर प्रभावित होंगे।" तीरथराम बोला।

"बात तो तुम पते की कह रहे हो तीरथराम ! मैं यह काम तुम पर ही छोड़ता हूँ। मेरी मानो, तुम शर्मा जी के घर का एक चक्कर काट आओ। आज उनके घर दावत है। काम-धाम में उनका हाथ बँटाना चाहिए। शर्मा जी इस गाँव के बुज़ुर्ग हैं। वह बुज़ुर्ग ही नहीं, दयावान वैद्य भी हैं। गरीब आदमी से दवा-दारू के पैसे तक नहीं लेते। जितने बडे वैद्य हैं, उतना ही बड़ा दिल दिया है उन्हें भगवान ने।"

"ठीक है, मैं जाता हूँ। नगेन्द्र मेरी बात कभी नहीं टालेगा", कहकर तीरथराम चल दिया। धीरजसिंह और विजयपाल अपने-अपने रास्ते पर चले गए। रामधन खेतों की ओर मुड़ चला।

आठ

आज पंचायत में खूब गहमा-गहमी थी। सभी पंच और गाँव वाले वहाँ थे। तीरथराम नगेन्द्र को भी ले आया था। वह पंचों के पास ही बैठे थे। उन्हीं के पास आदित्य बैठा हुआ पंचायत की कार्यवाही को उत्सुकता से देख रहा था।

पंचायत की कार्यवाही शुरू हुई। सबसे पहले करीम खाँ के लड़के बुद्धन से बात पूछी गई। फिर सरपंच ने रामपाल से कहा – "ठाकुर, तुम सफाई में कुछ कहना चाहते हो क्या?"

रामपाल तो अपने घमंड में था। मूँछों पर ताव देता हुआ बोला – "मैं किसी पंचायत से नहीं डरता। मैं यहाँ फैसले के लिए भी नहीं आया। इसने मेरे खेत में भैंस घुसाई। मैंने इसे सज़ा दे दी। बात खत्म। यह अदालत में जाए तो जाए। मैं भी पूरा मुकदमेबाज़ हूँ।" इतना कहकर वह बैठ गया।

उसकी बात सुनकर सभी पंच और गाँव वाले चुप हो गए। तभी सरपंच के आसन से बोलते हुए रामधन ने कहा – "ठाकुर रामपाल, यह पंचायत है। तुम्हें पंचायत की मर्यादा रखनी चाहिए। तुमने कहा, पंचायत से नहीं डरते। इसका मतलब है, तुम गाँव, समाज और भाईचारे की मर्यादा को चुनौती दे रहे हो। फिर एक बार सोच लो, तुम क्या कह रहे हो?"

"सोच लिया सरपंच साहब ! खूब सोच लिया। तुम क्या मुझे सूली पर चढ़ा दोगे। मैं किसी का उधार नहीं खाता। अपना फैसला, अपने पास रखो," कहता हुआ वह वहाँ से जाने लगा।

नगेन्द्र शर्मा ने उसे रोकते हुए कहा – "ठाकुर साहब, इस तरह नाराज़ होकर जाना ठीक नहीं। लोकतंत्र में सभी को अपनी

बात कहने का पूरा हक है। आपने अपनी बात कह दी। अच्छा किया। आप आज्ञा दें, तो मैं भी अपनी बात कह दूँ।"

"तुम कहते हो तो मैं रुक जाता हूँ। कहो अपनी बात," ठाकुर उसी ठसके के साथ बोला।

"बुरा न मानना रामपाल जी, एक दिन आप शहर में मेरे पास आए थे। आपका कोई मुकदमा हाई कोर्ट में था। उसके लिए आपको वकील करना था। आपने मुझसे आकर कहा था – 'भइया, तुम हमारे गाँव के हो। हमारे ही भाई हो। भाई की सहायता करना भाई का फ़र्ज बनता है।' मैंने आपकी बात मान ली थी। शायद आप मुकदमा जीत भी गए।"

"मैं तुम्हारे एहसान को मानता हूँ," रामपाल बोला।

"बात एहसान की नहीं ठाकुर साहब ! बात है भाईचारे की। उस दिन आपने गाँव के भाईचारे की दुहाई दी थी। आज आप उसी को नकार रहे हैं। भला, यह क्या बात हुई।"

सुनकर रामपाल ठंडा पड़ गया। बोला – "तो बताओ, मैं क्या करूँ?"

"गाँव में गरीब–अमीर सभी रहते हैं। सभी का यह गाँव है। सभी को जीने का अधिकार है। यहाँ हरेक मनमानी करेगा, तो कैसे चलेगा! करीम खाँ ने आपका क्या बिगाड़ा है। भैंस खेत में चली गई, मगर इसका दंड इतना तो नहीं कि आपने लड़के को लाठियों से पीटा ! वह मर जाता तो? भाईचारा रखने के लिए क्रोध नहीं, सहनशीलता की ज़रूरत है," नगेन्द्र ने कहा।

"ठीक है, मुझसे गुस्से में ज़्यादती हो गई, अब क्या करूँ?"

"यह हुई बात !" नगेन्द्र शर्मा ने कहा।

यह बात सुनकर गाँव वाले ताली पीट-पीटकर नगेन्द्र शर्मा को

बधाई देने लगे। नगेन्द्र कहने लगे – "बधाई मुझे नहीं, ठाकुर रामपाल को दो। इनका मन बदल रहा है। इन्होंने अपनी गलती मान ली है। गलती मानने वाला आदमी ही सच्चा इंसान होता है। गलती मानने पर सुधार का दरवाजा खुल जाता है।"

"सचमुच भइया ! मैंने गलती मान ली।"

यह सुनकर नगेन्द्र शर्मा ने ठाकुर को गले लगा लिया। बोले – "आपने पंचायत को बुरा-भला कहा। पंच तो परमेश्वर होते हैं। इनसे भी क्षमा माँगनी चाहिए।"

"चलो, क्षमा माँगता हूँ। अब आगे बढ़ो। मुझे दंड सुनाओ।"

"हाँ, दंड से आपका पीछा नहीं छूटेगा ठाकुर साहब ! अब पंचायत की आज्ञा लेकर मैं आपको दंड दूँगा।"

"हमारी ओर से इजाज़त है। आपकी हर बात पंचायत मानेगी।" सरपंच रामधन ने कहा।

"आज मेरे घर भोज है। उसमे आप सभी आमंत्रित हैं। दंड यही है कि पहली पंक्ति में करीम चाचा बैठेंगे और उन्हें जिमाएँगे ठाकुर रामपाल। इसके बाद दूसरी पंगत मे ठाकुर रामपाल बैठेंगे और मैं उन्हें खाना खिलाऊँगा। क्यों मंजूर है न ठाकुर साहब !" सुनने वालों के चेहरों पर खुशी चमक उठी।

तभी रामधन ने कहा – "एक विनती मेरी भी है। अब मैं सरपंच के नाते नहीं, गाँव का एक सेवक होने के नाते बोल रहा हूँ।"

"तुम भी अपनी कहो," गाँव वाले बोले।

"आज तो नगेन्द्र भइया सभी को अच्छा-अच्छा काम बाँट रहे हैं। मगर वह मुझे भूल ही गए। मैं भी कम नहीं। अपना हक लेकर रहूँगा। आज की दावत में मेरा काम होगा सबकी पत्तलें उठाकर फेंकना। सरपंच को सबसे बड़ी सेवा का हक होता भी

है, क्योंकि वह गॉव का सबसे बड़ा सेवक है।" रामधन की बात सुनकर सभी तालियॉ पीटने लगे।

धीरजसिंह ने हाथ उठाकर कहा – "नगेन्द्र भइया ने गॉव के टूटते भाईचारे को जोड दिया। मै इसी खुशी में उन्हें दावत देता हूँ। कल वह मेरे घर भूरी भैंस के दूध की खीर खाएँगे। क्यों मंजूर है भइया?"

"बिलकुल मंजूर है," नगेन्द्र शर्मा ने कहा।

इसके कुछ ही घंटे बाद वैद्यराज शर्मा जी के यहॉ दावत हुई। खूब चहल-पहल रही। ऐसी दावतें कम ही होती थीं उस गाँव में। गॉव के हर घर से एक-एक आदमी इस दावत में शामिल हुआ था। सभी ने एक साथ बैठकर खाना खाया।

दावत के बाद वैद्य जी के घर भरा-पूरा दरबार लगा। नगेन्द्र शर्मा कह रहे थे – "मैं पिछले दिनों विदेश गया था। वहाँ के गाँव देखकर हैरान रह गया। शहरों से भी अधिक सुविधा संपन्न हैं वहाँ के गॉव। लंबी-चौडी सड़कें। हवादार पक्के मकान। हम चाहें तो हमारे गॉव भी वैसे बन सकते हैं। हम सरकार के ऊपर निर्भर क्यों रहें? गाँव आपका है। आपको इसमें रहना है। इसकी देखभाल करने की ज़िम्मेदारी भी आप सबकी है। मैं आप लोगों से एक प्रार्थना और करना चाहता हूँ , इसीलिए आपको बुलाया है।"

"अरे, प्रार्थना कैसी? आप आज्ञा करें," धीरजसिंह खड़ा होकर बोला।

"दीपक इंजीनियर हो गया है। मैंने इसे समझाया है कि यह छह महीने गाँव में रहकर गाँव की सेवा करे। बाद में नौकरी ढूँढे या अपना काम करे। आप इसे सहयोग देंगे, तो यह गॉव में कुछ करके दिखाएगा।"

"क्या करना है हमें?" गाँव वालों ने पूछा।

"हमारे गाँव में बरसात में चारों ओर पानी भर जाता है। बरसाती नाला हमेशा खतरा ही बना रहता है। मैं चाहता हूँ, आप दीपक के साथ मिलकर बाँध बनाएँ, ताकि बरसाती नाले का पानी गाँव की फसल को बरबाद न कर सके।"

"अरे, यह तो आपने हमारे फायदे की बात बता दी। हम तो इस बारे में ज़िलाधीश के यहाँ दरख्वास्त देते-देते हार गए। सच, नाले से हम बडे परेशान हैं।"

"अब हम सब मिलकर इस परेशानी को हल करेंगे," दीपक ने उठकर कहा।

"ठीक है, ठीक है," चारों ओर से उठती आवाज पूरे घर में छा गई।

तभी रामदेई काकी वहाँ आ गईं। बोली – "मुझे भी कुछ कहना है।"

"तुम्हें क्या कहना है काकी ! कोई झगड़े वाली बात मत कहना। वर्ना मुझसे बुरा कोई न होगा," तीरथराम बोला।

"अरे, तू बैठ भी तीरथ ! बडा आया काकी को समझाने वाला। तुम सब रहे भोले के भोले। पता है, नगेन्द्र के छोटे से छोकरे ने कश्मीर में क्या किया? गाँव का नाम रोशन हो गया।"

"क्या किया काकी? सच, हमे तो कुछ पता ही नहीं।"

"मैं बताता हूँ," कहते हुए वैद्य जी ने सारी बात विस्तार से गाँव वालों को बताई। सुनकर सभी भौंचक्के रह गए। बोले – "इतना चतुर है छोकरा ! भई कमाल कर दिया !"

उसके बाद सब अपने-अपने घरों की ओर चल दिए, मन में उत्साह और चाल में स्फूर्ति का एहसास लिए।

नौ

गाँव से आदित्य तरह-तरह के अनुभव लेकर लौटा था। वह गाँव में ज़्यादा दिन नहीं रहा, मगर इन तीन दिनों में ही उसने गाँव के बारे में बहुत सी बातें जान ली थीं। वह सोच रहा था – 'पढ़ाई-लिखाई जीवन में कितनी ज़रूरी है।' उसने देखा था कि गाँव के बड़े-बड़े झगड़ों को उस दिन उसके पापा ने चुटकी बजाते ही हल कर दिया था। पढ़ाई-लिखाई के कारण ही गाँव वाले उसके पापा की कितनी इज़्ज़त करते हैं। उसने यह सारी बात अपने मित्र आलोक को बताई।

आलोक भी कुछ नया काम करने की उधेड़-बुन में दिन-रात लगा रहता था। उसने स्काउटिंग में भी हिस्सा लेना शुरू कर दिया था। गर्मियों की छुट्टियों में स्काउटिंग के कैम्प लगते ही हैं। आलोक इन कैम्पों में जाने का इच्छुक था। उसका एक मित्र बता रहा था – 'कैम्प का अपना ही आनंद होता है।' जीवन में अनुशासन का सबसे अच्छा पाठ कैम्पों में ही पढ़ाया जाता है।

कुछ दिन बाद आलोक के स्कूल में एक नाटक होने वाला था। उसकी बड़ी इच्छा थी कि नाटक में भाग ले। मम्मी-पापा से अनुमति लेकर उसने भी अपना नाम नाटक के पात्रों में लिखवा दिया था।

एक दिन मम्मी ने कहा – "केवल नाटक में भाग लेना ही काफी नहीं। कुछ करके भी दिखाना चाहिए। अपने अभिनय को खूब जमाकर करना चाहिए, ताकि वह नाटक न लगकर असलियत लगे।"

आलोक बोला – "मम्मी, मैं खेल-कूद में बढ़-चढ़कर भाग लेता

हूँ, इसलिए मेरे साथी मुझे जेम्स बांड के नाम से पुकारते हैं। नाटक में भी मुझे एक ऐसे ही चरित्र का अभिनय करना है। नाटक के दिन शिक्षामंत्री भी आऍगे। अच्छा अभिनय करने वाले लडकों को वह इनाम भी देंगे।"

"मुझे पूरी आशा है, तुम्हें इनाम ज़रूर मिलेगा। वैसे भी तुम्हें नाटक में लगन से काम करना चाहिए। लालच इनाम का हो या किसी और चीज़ का, अच्छा नहीं। तुमने यह तो बताया नहीं कि आदित्य नाटक में क्या पार्ट कर रहा है?"

"मम्मी, उसका पार्ट सुनोगी तो हॅसोगी। उसने अपने लिए तस्कर का पार्ट चुना है। वह तस्कर बनेगा। मैं उसे पकड़कर कानून के हवाले करूँगा।"

"वाह, भई ! दोनों दोस्त नाटक में एक दूसरे के जानी दुश्मन बनोगे। कोई बात नहीं। मगर यह याद रखना, नाटक में दोस्ती ज़रा मत निभाना। दोनों अपना-अपना काम जानी दुश्मन बनकर ही करना। तुम दोनों एक बार अपनी-अपनी रिहर्सल मेरे सामने भी तो करो।"

"अरे, इसमें कौन सी बड़ी बात है। कल शाम को ही सही।"

अगले दिन जब आलोक स्कूल से आ रहा था, उसने रास्ते में एक घायल कुत्ते को देखा। वह दर्द से चीख रहा था। सड़क पर किसी साइकिल से टक्कर खाकर गिर गया था। कुत्ते को काफी चोट लगी थी। टॉग के पास से खून बह रहा था। आलोक को उस पर दया आ गई। वह उसे घर ले आया।

मम्मी ने देखा, तो नाराज होने लगी – "तू इसे क्यों उठा लाया? यहॉ कौन करेगा इसकी दवा दारू? ऐसे कुत्ते को घर नहीं लाना चाहिए।"

यह सुनकर आलोक उदास हो गया। उसकी ऑंखें डबडबा

आई। मम्मी ने यह देखा, तो आँचल में समेट लिया। बोलीं – "गुमसुम क्यों है? क्या मम्मी की बात का बुरा मान गया?"

"मम्मी, एक दिन आप मुझे महात्मा बुद्ध की कहानी सुना रही थीं। आपने ही बताया था कि बुद्ध बडे दयालु थे। वह सभी प्राणियों को बराबर मानते थे। आपने यह भी कहा था, हमें जीवों पर दया करनी चाहिए। क्यों मम्मी? क्या यह कुत्ता उन जीवों में नहीं आता?"

मम्मी चुप, क्या उत्तर दें ! उन्हें चुप देखकर आलोक बोला – "मम्मी मैंने कुछ गलत कहा क्या? आप चुप क्यों हो गईं? क्या जीवों पर दया नहीं करनी चाहिए?"

"ज़रूर करनी चाहिए बेटा ! तुमने ठीक ही किया। मैं इसके घावों को धोकर दवा लगा देती हूँ। फिर तुम इसे बाहर छोड़ आना।"

"बाहर कहाँ?"

"कहीं भी।"

"फिर इसके घावों पर दवा कौन लगाएगा मम्मी? जब तक यह ठीक नहीं होता, क्या हम इसे अपने पास नहीं रख सकते?"

मम्मी ने कुत्ते के घाव को धोकर दवा लगा दी। फिर आलोक से कहा– "जाओ, इसे बाहर छोड़ आओ।"

आलोक बेमन से उसे ले जाने लगा तो कुत्ता उसका पैर चाटने लगा। उसको दया आ गई। बोला – "मम्मी, लगता है यह भूखा है। बेचारे को खाना तो खिला दूँ। तभी बाहर छोड़कर आऊँगा।"

मम्मी को उसकी बात माननी पड़ी। आलोक ने एक कटोरी में दूध और डबलरोटी भिगोकर कुत्ते के आगे रख दी। वह भूखा तो था ही। लपर-लपर जीभ चलाकर सफाया कर दिया। फिर भागकर एक कोने में दुबक गया। यह देखकर आलोक बोला –

"मम्मी, यह जाना नहीं चाहता। किसी बीमार जीव को इस तरह भगाना भी ठीक नहीं।"

मम्मी ने आलोक को बहुतेरा समझाया मगर शाम तक कुत्ता घर पर ही रहा। शाम को पापा आए तो आलोक ने कहा – "पापा, यह बेचारा घायल है। मम्मी इसे घर पर नहीं रखना चाहती। मुझे इसकी ज़रूरत है।"

"तुम्हें इसकी किसलिए ज़रूरत है?" पापा ने पूछा।

"नाटक में मेरे पार्ट के हिसाब से मेरे साथ एक कुत्ता भी होना चाहिए। वह मेरे इशारे पर दुश्मन पर झपटेगा। पार्ट भी यही है, कुत्ता झपटता है, उसी से दुश्मन की रिवाल्वर का निशाना चूक जाता है।" आलोक ने बताया।

"नाटक की बात ठीक है। मगर वैसा कुत्ता यह नहीं। वे प्रशिक्षित कुत्ते होते हैं। उन्हें सब सिखाया जाता है।"

"मगर इसे भी तो प्रशिक्षित किया जा सकता है, पापा?" आलोक ने कहा।

पापा ने हँसकर कहा –"वे बढ़िया नस्ल के कुत्ते होते हैं। कुत्ते दस-पाँच दिन में तो सीखते नहीं। उन्हें सिखाने में वर्षों लग जाते हैं। तुम्हारा नाटक दो महीने बाद है। तब तक यह कुछ भी नहीं सीख पाएगा। जाने दो इसे।"

"कोशिश करने में क्या हर्ज है। मुझे तो यह भी अच्छी नस्ल का लगता है। घर में रहने के लिए यह बार-बार मेरे पैर चाटता है। लगता है, यह सीख जाएगा।"

"ठीक है, तुम नहीं मानते तो करो कोशिश। मगर कल इसे अस्पताल ले जाना। वहाँ इंजेक्शन लगवा लाना, वर्ना इसके घाव आसानी से ठीक नहीं होंगे।"

पापा की बात मान आलोक कुत्ते की देख-रेख में लग गया। वह उसे पास के पार्क में ले जाकर इशारे पर गेंद उठाना, भागना, झपटना सिखाने लगा। आलोक मन में खुश था। उसे पूरा विश्वास था कि सीखकर वह उसके साथ नाटक में भाग लेगा। वह नाटक की रिहर्सल में भी उसे ले जाने लगा।

दस

आखिर नाटक का दिन आ पहुँचा। आज आलोक बहुत ही चुस्त दिखाई दे रहा था। उसने सुबह उठकर नाश्ता किया। फिर कुत्ते को लेकर पार्क की ओर चला गया। वहाँ से एक घंटे बाद लौटकर आया। आज पापा घर पर ही थे। उन्हें भी चार बजे स्कूल जाना था। सभी बच्चों के माता-पिता को बुलाया गया था। आलोक तो दोपहर का खाना खाकर स्कूल चला गया था। वहाँ पहले पहुँचकर उसे नाटक की तैयारी करनी थी।

ठीक समय तालियों की गडगडाहट के बीच पर्दा उठा। नाटक शुरू हो गया। सबसे पहले यह दिखाया गया कि व्यापारी किस तरह जमाखोरी करते हैं। फिर दूसरे दृश्य में घूस लेने वाले अफसरों और व्यापारियों की मिलीभगत से होने वाले भ्रष्टाचार का दृश्य था। इससे स्पष्ट होता था कि इसी मिलीभगत के कारण बाज़ार से चीजें गायब होती हैं, चीजों के दाम बढते हैं और जनता परेशानी में पड़ती है।

बच्चे बड़ी खूबी से अपना-अपना पार्ट अदा कर रहे थे। उनके संवाद बड़े ही पैने और मन पर असर करने वाले थे। आलोक की मम्मी और आदित्य की मम्मी पास-पास बैठी थीं। आपस में कह रही थी – "आदित्य और आलोक का पार्ट अभी नहीं आया।"

तभी पर्दा फिर उठा। सामने ही तीन-चार खूंखार-से पात्र नजर आए। ये सब तस्करों के वेश में थे। उनमें से एक बोला – "अभी तक उस्ताद नहीं आए। पता चला है, आज रात माल से लदे जहाज आने वाले हैं। किनारे पर पहुँचने से पहले ही हमें उस माल को इधर-उधर करना होगा।"

दूसरे ने कहा – "यार, चिंता न करो। उस्ताद का हुक्म पाते ही माल इधर-उधर हो जाएगा। अपन और हैं किसलिए?"

वे आपस में बात कर ही रहे थे, तभी पर्दे के पीछे से उस्ताद दिखाई दिए। कमर में लटकती रिवाल्वर। चमडे की पेटी के ऊपर बंधे कारतूस।

उस्ताद को देखते ही चेले तस्कर बाअदब खड़े हो गए। उस्ताद रौब से बोले – "शेरू, तूने समझा दिया इन्हें काम?"

"जी, उस्ताद। रात 8 बजे। सर्च लाइट पड़ेगी और हमारा स्टीमर आगे बढ़ेगा। जहाज से माल भरकर सीधा गोदाम में।"

"अरे, कह तो ऐसे रहा है, जैसे ससुराल से माल लाना है। इतना आसान नहीं। रास्ते में पुलिस का खतरा भी तो है।"

"पुलिस, पुलिस को हम कुछ नहीं समझते उस्ताद। एक हाथ पड़ा कि ज़मीन सूंघने लगते हैं। फिर पैसे में तो बडी ताकत होती है !"

"अब वो बात नही। इंस्पैक्टर ज़ीरो फाइव हमारे पीछे लगा है। बड़ा ज़ालिम है। उससे टकराना, मौत से टकराने के समान है। मगर मेरा नाम भी चिश्ती है। मैंने इंस्पैक्टर को भिश्ती न बना दिया तो मेरा नाम भी चिश्ती नहीं," कहते हुए उस्ताद ने मूँछें उमेंठी। उसे ऐसा करते देख, आलोक की मम्मी बोली – "देखा आदित्य को! रौबदार लग रहा है। इसे इनाम ज़रूर मिलेगा।"

"अभी देखती जाओ। अपना इंस्पैक्टर ज़ीरो फाइव तो अभी आया ही नहीं, उसका भी कमाल देखना है।"

तभी पर्दा फिर गिरा। गिरकर उठा। दृश्य था कोतवाली का। पुलिस का बड़ा अफसर बैठा था। आसपास दूसरे अफसर भी थे। बड़ा अफसर कह रहा था – "आजकल तस्करी का धंधा बहुत

बढ गया है। बड़े पैमाने पर हो रहा है यह काम। देश के व्यापार को इससे बहुत नुकसान पहुँच रहा है। कालाधन बढ़ गया है। इस व्यापार को तहस-नहस करना ज़रूरी है। कमिश्नर साहब का दबाव भी बढ़ रहा है, जल्दी ही कुछ करना पड़ेगा।"

पास बैठा हुआ पुलिस अफसर कहने लगा – "सर, पता चला है, आज रात माल से भरा एक जहाज आ रहा है। उसमें बहुत-सा तस्करी का माल है। उस पर छापा मारना चाहिए। कामयाबी मिल गई, तो पुलिस को इज़्ज़त मिलेगी।"

"वैरी गुड, इस काम के लिए चीते को भेजना चाहिए।"

"चीते को ! कौन चीता सर?"

"अरे, इंस्पैक्टर ज़ीरो फाइव।"

"आपने ठीक कहा सर। इंस्पैक्टर जीरो फाइव ही इस गिरोह पर हाथ डाल सकता है। वैसे हम उसके साथ रहेंगे ही।"

"इंस्पैक्टर अभी आया नहीं?" बडे पुलिस अफसर ने बैचेनी से पूछा।

"गुड मार्निंग सर," इंस्पैक्टर ज़ीरो फाइव ने सैल्यूट मारते हुए कहा।

"यंग मैन, यू आर हीयर। हम अभी तुम्हें याद कर रहे थे। तुम कुछ करने के लिए बेचैन रहते हो न?"

"यस सर ! कर्त्तव्य का पालन करना गौरव की बात है। आज्ञा कीजिए।"

पुलिस अफसर उसे ब्यौरेवार सारी बात बताने लगा। इसके बाद उसने धीरे से कहा – "तस्कर सरदार चिश्ती को पकड़ना हमारे लिए अब ज़रूरी हो गया है। मगर याद रहे, वह आफत का परकाला है। सोच-समझकर हाथ डालना।"

"आप चिंता न करें सर ! जीरो फाइव कभी कच्ची गोटियाँ नहीं खेलता। आज रात के बारह बजे तक चिश्ती आपके कदमों में होगा।"

"शाबाश मेरे चीते ! हमारी शुभकामनाएँ तुम्हारे साथ हैं। पुलिस के सिपाही गाड़ियों में तुम्हारे साथ होंगे। मैं यहाँ बैठा, तुम्हारी सफलता का इंतजार करुँगा।"

इस बार इंस्पैक्टर जीरो फाइव ने डबल सैल्यूट मारा। पर्दा फिर गिराया गया। दर्शक तालियाँ बजाने लगे।

"अरे, अपना ज़ीरो फाइव तो बाजी मार ले गया।" आदित्य की मम्मी ने आलोक की मम्मी से कहा। बेटे का पार्ट देखकर आलोक की मम्मी की ऑखें खुशी से नम हो गई थीं। वह चुपके से आँसू पोंछ रही थीं।

फिर आया आखिरी दृश्य। पुलिस ने तस्करों को जा घेरा। दोनों ओर से गोलियाँ चलने लगीं। तभी पीछे से जीरो फाइव ने रिवाल्वर तानकर चिश्ती से कहा – "तेरा आखिरी वक्त आ गया चिश्ती ! हथियार डाल दे, वर्ना अभी जहन्नुम की रसीद काट दूँगा।"

चिश्ती ने इधर–उधर देखा। बोला – "इंस्पैक्टर, चिश्ती हथियार कभी नहीं डालता। मगर आज तुझ पर रहम खाकर ले मैं हथियार फेंक देता हूँ। कर ले गिरफ्तार।"

इंस्पैक्टर आगे बढ़ा, तो चिश्ती ने दॉव पलटा। इंस्पैक्टर को ठोकर मारी। वह गिर पड़ा। चिश्ती ने जेब से दूसरी पिस्तौल निकालकर उस पर वार करना चाहा, तभी इंस्पैक्टर ने सीटी बजाई। सीटी की आवाज़ सुनकर उसका प्रशिक्षित कुत्ता चिश्ती पर झपटा। चिश्ती घबरा गया। मौका देख, इंस्पैक्टर ने उसे दबोच लिया।

इस बार तालियों की गड़गड़ाहट से हॉल देर तक गूँजता रहा। आखिरी दृश्य में चिश्ती जेल में और इंस्पैक्टर ज़ीरो फाइव के कंधे पर एक नया स्टार नज़र आने लगा। यानी उसकी तरक्की हो गई थी। इसके बाद नाटक समाप्त।

नाटक के बाद जलपान का आयोजन था, ताकि इस बीच निर्णायक मंडल अपना निर्णय कर सके। उसके बाद पुरस्कार वितरण का कार्यक्रम था।

लगभग एक घंटे बाद फिर से दर्शक कुर्सियों पर आकर बैठ गए। मंच पर शिक्षामंत्री और निर्णायक दल के सदस्य बैठे थे। सभी धड़कते दिल से पुरस्कार के फैसले के इंतज़ार में थे।

"आज के नाटक में सर्वोत्तम अभिनय के लिए विशिष्ट पुरस्कार पाया है इंस्पैक्टर जीरो फाइव यानी आलोक गुप्ता ने," घोषणा हुई।

हॉल तालियों से गूँज उठा। इसके बाद प्रथम पुरस्कार की घोषणा हुई। वह मिला था चिश्ती यानी आदित्य शर्मा को। दूसरे पुरस्कारों की घोषणा समाप्त होने के बाद शिक्षामंत्री ने कहा – "अभी एक अभिनेता रह गया है। स्कूल ने उसे भी सम्मानित किया है। वह है इंस्पैक्टर का साथी कुत्ता। यह मखमली पट्टा उसके लिए है।"

यह सुनकर दर्शक ज़ोर से ठहाके लगाकर हँसने लगे। आलोक के पापा ने पत्नी से कहा – "लो, आलोक बाज़ी मार ले गया। मेहनत रंग लाई। उसका कुत्ता भी इनाम पा गया। अब तो इस इनामी कुत्ते को घर में रखना ही पड़ेगा।" सुनकर मम्मी मुस्कुराने लगीं।

ग्यारह

नाटक भी हो गया। इनाम भी मिल गए। फिर भी आलोक बहुत ज्यादा खुश नहीं था। वह आदित्य की तरह कोई अनोखा काम करके लोगों को चौंका देना चाहता था। उसने तय कर लिया था कि जैसे भी हो, मैं कोई अच्छा काम करके ही रहूँगा।

इसी बीच वार्षिक परीक्षाएँ निकट आ गई थीं। आदित्य और आलोक दोनों खूब मन लगाकर पढ़ रहे थे। आलोक तो इस बार पढ़ने-लिखने में इतना लगा था कि इधर-उधर जाना और मित्रों के साथ गप्प हाँकना भी छोड दिया था। वह चाहता था, कक्षा में प्रथम आए। फिर भी उसने सुबह घूमना नहीं छोड़ा था। एक दिन उसके दादा जी गाँव से आए थे। उन्होंने 'महाभारत' का उदाहरण देकर बताया था कि सभी अच्छे कामों का आधार अच्छा स्वास्थ्य होता है। ठीक भी है, अगर आदमी बीमार रहेगा, तो वह चाहकर भी भलाई के काम नहीं कर पाएगा। उसकी पाठ्यपुस्तक में भी ऐसे कई उदाहरण हैं। इन्हीं बातों को ध्यान में रखकर वह अपने स्वास्थ्य का बहुत ध्यान रखता था।

उसे सुबह नंगे पैर ओस में घूमना बहुत अच्छा लगता था। वह जिस सड़क पर घूमने जाता था, वहाँ एक गिरजाघर था। गिरजाघर के अंदर घास का एक बड़ा लॉन था। लॉन के आसपास गुलाब के फूल खिले थे। वह प्रतिदिन उस लॉन पर घूमता, मगर भूलकर भी फूलों को हाथ नहीं लगाता था। शाखों पर मुस्कुराते गुलाब के फूल उसे हमेशा ही अपनी ओर आकर्षित करते थे। सुबह की ओस गुलाब की पंखुड़ियों पर बिखरे मोती जैसी लगती थी। फिर भी आलोक फूलों को नहीं तोड़ता था।

एक बात उसे हमेशा ही रोमांचित करती थी। गिरजाघर में हरसिंगार के फूलों के कई पेड़ थे। सुबह-सुबह उनके आसपास डालियों से टूटे सैकड़ों फूल ज़मीन पर बिखरे रहते थे। माली उन्हें चुनने से कभी इनकार नहीं करता था। वह देखा करता था, सुबह के समय गिरजाघर की प्रार्थना का घंटा बजने से बहुत पहले गिरजाघर के पादरी बहुत से हरसिंगार के फूलों को लेकर कब्रिस्तान में जाते थे। अक्सर आलोक घूमने निकलता, तो पादरी रास्ते में मिलते। उसकी समझ में नहीं आता, पादरी सुबह कब्रिस्तान में क्यों जाते हैं?

कुछ दिन तक वह यह सब देखता रहा। फिर अपनी उत्सुकता रोक नहीं पाया। उसने निश्चय किया कि वह पादरी के पीछे-पीछे जाएगा ! स्वयं देखेगा कि पादरी फूल लेकर वहाँ क्यों जाते हैं?

एक दिन आलोक घूमने के लिए दूसरे दिनों की अपेक्षा थोड़ा जल्दी चल पड़ा। वह गिरजाघर के पास पहुँचा तो ठिठक गया। पादरी फूल लेकर निकल रहे थे। आज थोडा धुंधलका था। आलोक दबे पैरों पादरी के पीछे-पीछे चल दिया।

उसने देखा, पादरी एक कब्र के पास पहुँचे। फिर उन्होंने हरसिंगार के ढेर सारे महकते फूल एक कब्र के इधर-उधर बिखरा दिए। इसके बाद वह कुछ क्षण मौन खड़े रहे। फिर होठों में कुछ बुदबुदाकर लौट पड़े।

आलोक एक तरफ छिपा, यह सारा दृश्य देख रहा था। पादरी फाटक से बाहर चले गए, तो आलोक कब्र के पास पहुँचा। वह कब्र पर लगे पत्थर के अक्षर पढ़ने लगा। लिखा था – 'इसमें प्रभु यीशू का प्यारा बहादुर बच्चा अब्राहम आराम कर रहा है।'

यह पढ़कर आलोक सोचने लगा – 'इस बच्चे ने ज़रूर कोई

अच्छा काम किया होगा, इसीलिए तो बहादुर शब्द लिखा गया है। इसके बारे में पादरी से जाकर पूछना चाहिए। आखिर ऐसी क्या बात है, जिससे प्रभावित होकर पादरी रोज़ इसकी कब्र पर फूल चढ़ाने आते हैं।'

रविवार होने के कारण गिरजाघर में काफी भीड़ थी। प्रार्थना के लिए बहुत से स्त्री-पुरुष वहाँ आए थे। इसीलिए आलोक को इंतज़ार करते-करते देर हो गई। वह घर से कुछ खा-पीकर भी नहीं आया था। उसने तय कर लिया था कि आज पूरी बात जानकर ही घर जाएगा।

गिरजाघर में प्रार्थना पूरी हुई। उसके बाद पादरी ने प्रवचन किया। फिर धीरे-धीरे भीड़ छँटने लगी। भीड़ चली गई, तो आलोक गिरजाघर के अंदर गया। पादरी भी अपना कार्य समाप्त करके जाने वाले थे। अपने सामने आलोक को देख, वह आश्चर्य से बोले – "तुम ! तुम इस समय क्यों आए हो? क्या बात है बेटा?"

पादरी आलोक के पापा को जानते थे। उन्हीं की दुकान से वह सामान आदि खरीदा करते थे।

पादरी की बात सुनकर आलोक बोला – "आपसे कुछ पूछना है।"

"हॉं बेटे। पूछो ! कहो, क्या बात है?" पादरी ने आत्मीयता से कहा।

आलोक बात कहते हुए हिचकिचा रहा था। उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि बात कहाँ से शुरू करे। फिर थोडा रुककर बोला – "आप हर रोज़ कब्रिस्तान में किसकी कब्र पर हरसिंगार के फूल चढ़ाने जाते हैं?"

यह सुनकर पादरी अचम्भे में रह गए। बोले – "तुम्हें कैसे पता कि मैं रोज़ वहॉं जाता हूँ?"

"मैं आपको कई सप्ताह से देख रहा हूँ। मैं हर रोज सैर करने के लिए आता हूँ। मैं गिरजाघर के लॉन में आकर घूमता हूँ। हरसिंगार के फूलों से मुझे बहुत प्यार है।"

"बच्चे, तुम अभी छोटे हो। इन बातों को नहीं समझ सकोगे।"

"आप समझाएँगे, तो क्यों नहीं समझ सकूँगा! वह बहादुर बच्चा अब्राहम कौन था?" आलोक ने पूछा।

"क्या तुम उसकी कब्र पर गए थे? उसका नाम कैसे जानते हो?"

"जी, आपके पीछे-पीछे ही मैं वहाँ गया था। वहाँ पत्थर पर जो कुछ लिखा है, वह मैंने पढ़ा। उसी के बारे में पूछने के लिए आपके पास आया हूँ।"

"ओह, समझा ! तुम अब्राहम के बारे में जानना चाहते हो। जरूर जानो। अच्छे कामों के बारे में जरूर जानना चाहिए। आओ, इधर बैठ जाओ। मैं अब्राहम की बहादुरी की कहानी सुनाता हूँ।"

"मैं आया ही इसीलिए हूँ फादर ! जरा विस्तार से बताइए। अगर आज आपके पास समय कम हो तो कल बता दीजिएगा। मैं कल भी आ सकता हूँ।"

"नहीं, बेटे ! आज का काम कल पर नहीं छोड़ना चाहिए। मैं अभी तुम्हें सब कुछ बताता हूँ।"

आलोक एक कुर्सी पर बैठ गया। पादरी बताने लगे – "गिरजाघर के पास कुछ घर बने हुए हैं। तुमने देखे हैं न?"

"हाँ घर तो बने हुए हैं," आलोक बोला।

"आज से लगभग दस वर्ष पहले ये घर खपरैल के बने थे। कुछ के ऊपर फूस के छप्पर भी पड़े थे।" पादरी बताने लगे।

"तब क्या हुआ फादर?"

"हुआ क्या, तुम जिस अब्राहम की बात पूछ रहे हो, वह इन्हीं में से एक घर में रहता था, अपने माता-पिता के साथ। उसके माता-पिता गिरजाघर में सफाई का काम करते थे। तुमने अभी-अभी जिस बूढे को देखा था, वह अब्राहम का पिता ही है।"

"उसकी मॉ कहाँ है, फादर?"

"माँ, दो वर्ष पहले मर गई। तो हॉ, आगे सुनो। अब्राहम बड़ा ही होनहार लड़का था। वह चर्च के स्कूल में पढ़ता था। माँ-बाप गरीब थे, इसीलिए सुबह-शाम वह भी गिरजाघर के छोटे-मोटे काम करके पैसे कमाता था। पढ़ाई-लिखाई में बहुत ही तेज़ था। प्रार्थना के समय रोज़ आकर प्रार्थना करता था। कभी-कभी मुझसे बाइबिल के बारे में बहुत से प्रश्न पूछा करता था। उसकी बुद्धिमानी भरी बातें मुझे लुभाती थीं। मैं सोचा करता था कि आगे चलकर यह ज़रूर पादरी बनेगा। मगर प्रभु को यह मंज़ूर न था।" पादरी कुछ रुके और उन्होंने अपनी नम ऑखों को पोंछा।

"क्यों, क्या हुआ था उसे फादर? क्या कोई खतरनाक बीमारी हो गई थी?" आलोक ने पूछा।

पादरी संयत होकर बोले – "नहीं बेटा। वह कभी बीमार नहीं होता था। बहुत ही तंदुरुस्त और हँसमुख था वह। हुआ यह कि एक बार इन मकानों में भयंकर आग लगी। आग रात में लगी थी, इसीलिए जल्दी पता न चल सका। आग की गर्मी बढी, तो किसी की आँख खुल गई। वह चिल्लाया – 'भागो, भागो, आग लगी है।' सभी नींद में थे। मौत के भय से उठ-उठकर इधर-उधर भागने लगे। इन्हीं में एक बीमार महिला भी थी। उसका पति बाहर गया हुआ था। वह अपने दो वर्ष के बच्चे के साथ सोई हुई थी। किसी तरह वह तो उठकर बाहर आ गई, परंतु बच्चे को न ला सकी। बाहर आकर चिल्लाने लगी – 'बचाओ, बचाओ। मेरा बेटा घर के अंदर है।'

उसकी चीख-पुकार सुनकर भीड इकट्ठी हो गई। घर पूरी तरह आग से घिर चुका था। किसी की हिम्मत नहीं हो रही थी कि आग की लपटों को चीरता हुआ अंदर जाए और अंदर सोते हुए बच्चे को बाहर ले आए। सभी बाहर खड़े-खड़े उसे धैर्य बंधा रहे थे।

अपने बेटे के लिए तड़पती बीमार माँ ने कई बार स्वयं अंदर जाने की कोशिश की, मगर भीड़ ने उसे पकड लिया। अंदर जाने से रोक दिया। मैं भी आग लगने की बात सुनकर वहॉ गया था।

तभी अब्राहम तेज़ी के साथ उस भयानक आग की परवाह न करता हुआ मकान में घुस गया। माँ-बाप उसे पकडने दौड़े, किंतु उसने किसी की एक न सुनी। बहादुरी के साथ दौडता हुआ अंदर चला गया। थोडी देर बाद हमने देखा बच्चा अब्राहम की गोदी में है। वह आग की लपटों से संघर्ष करता हुआ, बाहर आने की कोशिश कर रहा था। हम लोग पानी की बालटियाँ लेकर भागे। आसपास की आग बुझाने लगे, ताकि उसे रास्ता मिल जाए। इसी बीच अब्राहम एक अधजली दीवार को फाँदकर बच्चे सहित बाहर आ गया।

बच्चा ठीक था। लेकिन अब्राहम बुरी तरह झुलस गया था। उसे तुरंत अस्पताल पहुँचाया गया। सभी लोग उसके साहस की सराहना कर रहे थे। उसके जल जाने से सभी दुखी थे। कह रहे थे – 'बच्चे को बचाने में बेचारा बुरी तरह झुलस गया। प्रभु यीशू उसकी रक्षा करें।' उसकी माँ का तो रो-रोकर बुरा हाल था," कहते हुए पादरी रुक गए।

"आगे क्या हुआ फादर?"

"होता क्या बेटे ! कई दिनों तक अब्राहम अस्पताल में पड़ा मौत से जूझता रहा, मगर एक शाम वह हम सबको छोडकर प्रभु

के घर चला गया। जिस दिन अब्राहम की मृत्यु हुई, यहाँ शोक छा गया। सभी ने उस बहादुर की मौत पर आँसू बहाए। उसकी मौत का सभी को गहरा दुख था। फिर उसे कब्रिस्तान में सुला दिया गया। आज भी वह वहाँ सो रहा है। उसने छोटी उम्र में बहुत बडा काम किया। वह नेक काम करके अपना जीवन सफल बना गया। नेक काम प्रकाश की ज्योति है बेटे ! वही ज्योति अब्राहम ने फैलाई। इसीलिए मैं उसकी कब्र पर फूल चढ़ाने रोज़ नियम से जाता हूँ।"

"आप अब्राहम को इतना मानते हैं फादर?"

"क्यों न मानूँ! अब्राहम तो मर गया, मगर उसने जो काम किया, वह अमर है। आदमी मर जाता है, पर उसके नेक काम कभी नहीं मरते।"

"फादर अभी आप कह रहे थे, अब्राहम के माँ-बाप यहाँ सफाई का काम करते थे। गरीब परिवार के बच्चे को भी आप इतनी इज़्ज़त देते हैं?"

"बेटे ! प्रभु यीशू के दरबार में कोई गरीब-अमीर नहीं। सभी उसकी संतान हैं। माँ-बाप की नजरों में सभी संतान समान होती हैं। बच्चे तो प्रभु को बहुत प्यारे होते है !"

"वह क्यों फादर?"

"बच्चे प्रभु का सच्चा स्वरूप होते हैं। उनके मन में अपने-पराए की भावना बिलकुल नही होती। उनकी हँसी निष्पाप होती है और उनका प्यार पवित्र। अब जाओ बेटे ! अब्राहम की कहानी खत्म हो गई।"

आलोक घर चला आया। उसके मन पर नेकी का प्रकाश दिनों-दिन फैलता जा रहा था। अब परीक्षाएँ पास आ गई थीं, इसलिए वह जी-जान से पढ़ाई में जुट गया। परीक्षा का परिणाम आया, तो मेहनत रंग लाई। आलोक इस बार कक्षा में सबसे ज़्यादा अंक लेकर उत्तीर्ण हुआ था।

बारह

शहर में चीनी और वनस्पति घी का अकाल-सा पड़ा था। सभी परेशान थे। लोगों का खयाल था कि व्यापारियों ने माल छिपाकर गोदामों में रख लिया है। अब चोरी-छिपे ज़्यादा दाम लेकर माल बेच रहे हैं। अक्सर ऐसा होता भी रहा है। सरकार के बार-बार चेतावनी देने पर भी व्यापारी वर्ग बाज़ नहीं आता। पैसे कमाने के लिए वह सरकार को धोखा देता है और साथ ही जनता को भी परेशान करता है।

एक शाम आदित्य के पापा के पास आलोक बैठा था। आदित्य की मम्मी कह रही थीं – "दुकानदार ने वनस्पति घी देने से इनकार कर दिया। उसका कहना है, बाज़ार में एक बूँद भी घी नहीं। हम कहाँ से लाएँ? वनस्पति बनाने वाली फैक्टरियाँ माल भेज ही नहीं रहीं। सरकार भी कुछ नहीं कर रही। क्या होगा? घर में बिलकुल घी नहीं है।"

"क्यों अंकल, जो दुकानदार घर में या गोदाम में घी और चीनी छिपाकर रखते हैं, क्या वे जनता के शत्रु हैं?"

"हैं क्यों नहीं ! देश की जनता को धोखा देना, माल की कमी होने का बहाना बनाकर चोरबाज़ारी से माल बेचना जुर्म है। ऐसे लोगों को कडी से कड़ी सज़ा मिलनी ही चाहिए।"

"क्या करना चाहिए ऐसे लोगों के साथ?" आलोक ने पूछा।

"अगर पता हो कि किसने माल छिपाया है, तो तुरंत उसकी शिकायत करनी चाहिए।"

"किससे शिकायत करनी चाहिए?"

"निकट के पुलिस थाने में या सिविल सप्लाई के किसी अधिकारी से। मगर तुम यह सब क्यों पूछ रहे हो?"

"अपनी जानकारी के लिए पूछ रहा हूँ अंकल।"

उस समय तो आलोक चुपचाप चला गया। थोड़ी देर बाद लौटा तो उसके हाथ में एक थैला था। उसने थैले में से निकालकर वनस्पति घी का एक डिब्बा आदित्य की मम्मी को देते हुए कहा – "आंटी, मैं आपके लिए घी लाया हूँ।"

"घी ! तुम कहाँ से ले आए घी?"

"घर से लाया हूँ आंटी।"

"अपनी मम्मी से पूछकर लाए हो?"

"मम्मी घर पर नहीं थीं, मगर क्या हुआ? चोरी से तो नहीं लाया। आप मम्मी को इसके पैसे दे दीजिएगा।"

"फिर भी मम्मी से पूछकर लाना था। क्या पता वह अपने लिए कहीं से लाई हों ! नहीं, मैं नहीं लेती इसे। वापस ले जाओ।"

"आंटी, सच मानिए मम्मी कुछ नहीं कहेंगी। हमारे घर में और भी घी है। मम्मी को पता नहीं था कि आपके घर घी नहीं, वर्ना वह पहले ही भेज देतीं।"

"ठीक है, रख दो। मैं तुम्हारी मम्मी से पूछे बिना इसे इस्तेमाल नहीं करूँगी।"

"आप जैसा ठीक समझें ! मैं इसे वापस नही ले जाऊँगा। आपको घी की ज़रूरत है, फिर भी इसे लेने से इनकार करती हैं। शायद आपको मेरा विश्वास नहीं," कहता हुआ आलोक चला गया। आदित्य की मम्मी ने उसे रोकना चाहा, मगर वह रुका नहीं। तभी आदित्य के पापा बाजार से सामान लेकर आए। वह

भी घी की खोज में गए थे, मगर निराश लौटे थे। घर आने पर पत्नी ने घी वाली बात बताई। कहा– "आज आलोक उदास था, बहुत ही उदास। मुझे लगता है, वह अपने घर से लड़–झगडकर हमारे लिए घी लाया है। इसके लिए उसे मम्मी-पापा की डाँट खानी पड़े, यह तो अच्छी बात नहीं। अगर ऐसा हुआ, तो उस मासूम को गहरा दुःख पहुँचेगा। आप अभी जाकर घी वापस कर आइए। वर्ना मैं जाती हूँ।"

"अरे, धैर्य रखो। घबराओ नहीं। आलोक के पापा पूरे व्यापारी हैं। ज़रूर उन्होंने घी और चीनी गोदाम में छिपाकर रखे होंगे। इस तरह घी वापस करने से उन्हें अच्छा नहीं लगेगा।" फिर कुछ ठहर कर बोले – "आलोक के पापा कहने को मेरे मित्र हैं। मगर एक दिन भी आकर नहीं पूछा कि हमें घी-चीनी की परेशानी तो नहीं है।"

"छोड़ो भी। हमें यह सब नहीं सोचना चाहिए।"

"क्या कहा जाए। यह समाज इतना स्वार्थी हो गया है कि इसे स्वार्थ के आगे अपना-पराया कुछ नहीं सूझता। फिर भी प्रकाश की एक किरण तो चमकी। इस बियाबान मे एक फूल तो खिला !"

"समझी नहीं।"

"मेरा मतलब आलोक से था। उस स्वार्थ से भरे घर में एक सही लड़का तो पैदा हुआ। मुझे उम्मीद है, आगे चलकर आलोक उस घर का नाम रोशन करेगा।"

"मगर घी का क्या करें?"

"करेंगे, करेंगे। घी वापस तो जाने से रहा। आलोक की मम्मी को इसके पैसे दे आना।"

तेरह

दूसरे दिन की खबर ने आदित्य के पापा-मम्मी को चौंका दिया। पता चला कि कल रात गुप्ता जी के गोदाम में छापा पड़ा। बहुत ज्यादा तादाद में घी और चीनी पकड़ी गई। खबर सुनकर आदित्य के पापा बोले – "यह तो बुरा हुआ। मुझे उनके घर जाना चाहिए। पता नहीं, पुलिस ने उनके साथ क्या सुलूक किया हो। ज़रूर पकड़कर ले गई होगी। ज़मानत कराकर छुड़ाना तो होगा ही। माना उन्होंने बुरा काम किया, मगर मुझे मित्र-धर्म तो निभाना होगा ही।"

"आप ठीक ही सोचते हैं। मैं भी आपके साथ चलती हूँ।" इतना कहकर वे दोनों चल पड़े।

आलोक के घर गए तो नज़ारा ही दूसरा था। उसकी मम्मी आलोक का नाम ले-लेकर बुरी तरह रो रही थीं।

"क्या हुआ आलोक को?" आदित्य के पापा ने पूछा।

"क्या बताऊँ भाई साहब ! आलोक ने ही गोदाम में माल जमा होने की सूचना पुलिस को दी। फिर मुझसे आकर सारी बात बता भी गया। मैं समझी, वैसे ही हँसी कर रहा है। मुझसे यह बात कहकर वह चला गया। शाम को छापा पडा। माल पकड़ा गया। पुलिस उसके पापा को पकडकर ले गई। मगर आलोक उसके बाद घर नहीं लौटा। पता नहीं, कहाँ गया होगा! उसे ढूँढ़िए। मेरा बेटा न मिला, तो मैं जान दे दूँगी।"

आदित्य के मम्मी-पापा दोनों ही परेशान हो उठे। उन्होंने दिलासा दिया – "आप चिंता न करें। आलोक जल्दी आ जाएगा। मुझे लगता है, उसने पुलिस को सूचना तो दे दी, मगर छापा

पड़ने और पापा की गिरफ्तारी ने उसे डरा दिया। इसी डर से वह घर लौटकर नहीं आया। मैं उसे ढूँढूँगा। पहले आप यह बताइए, गुप्ता जी की ज़मानत का क्या प्रबंध हुआ?"

"उसके लिए आदमी गए हैं। उनकी चिंता मुझे नहीं। गोदाम हमारा ज़रूर था, पर माल दूसरे का रखा हुआ था। पुलिस कागज़ देखेगी, तो सब साफ हो जाएगा।"

इसके बाद आदित्य की मम्मी को वहाँ छोड़कर शर्मा जी सीधे पुलिस स्टेशन गए। वहाँ इंस्पैक्टर भटनागर इंचार्ज थे। शर्मा जी उन्हें जानते थे।

नगेन्द्र शर्मा को देखते ही इंस्पैक्टर ने पूछा – "शर्मा जी। आपने यहाँ आने का कष्ट कैसे किया?"

"इंस्पैक्टर साहब। केस बड़ा नाज़ुक है। कल पुलिस ने गुप्ता जी के गोदाम पर छापा मारा था।"

"हाँ, मारा था। काफी सामान बरामद हुआ। गुप्ता जी अभी हवालात में हैं। ज़मानती मजिस्ट्रेट के पास गए हुए हैं। उस केस से आपका क्या लेना-देना?"

"लेना-देना है। पुलिस को गोदाम में माल होने की सूचना किसने दी?"

"दस-बारह बरस का एक लड़का आया था। ठहरिए, रजिस्टर में देखकर नाम बताता हूँ। हाँ, उसका नाम आलोक है। क्यों क्या हुआ?"

"इंस्पैक्टर साहब, वह शरीफ और होनहार लड़का है। आपको सुनकर आश्चर्य होगा, वह गुप्ता जी का ही इकलौता बेटा है।"

"क्या कहा ! गुप्ता जी का लड़का ! मगर उसने जान-बूझकर ऐसा काम क्यों किया? अपने पिता को कानून के पंजे में क्यों फँसाया?"

"इंस्पैक्टर साहब, यह काम करके उसने एक नई मिसाल कायम की है। बुरा काम बेटा करे या बाप, बुरा ही है। कालाबाज़ारी भी गद्दारी का ही दूसरा नाम है। उस लड़के में अच्छे संस्कार भरे हैं। उससे यह सहन नहीं हुआ कि उसका पिता गलत काम करे, इसीलिए उसने यह साहसी कदम उठाया।"

"काम तो सचमुच साहस का ही किया उस होनहार ने। उस लड़के को इनाम मिलना चाहिए। मुझे बताइए, मैं क्या करूँ?"

"वह लडका डर के मारे घर से भाग गया है। कल से लौटा नहीं। उसे तलाश करने में आप मेरी मदद कीजिए।"

"मैं अभी शहर के हर थाने, चौकी और रेलवे स्टेशन को इसकी सूचना दिलवाता हूँ। आप जरा उसका हुलिया बताइए।"

शर्मा जी ने इंस्पैक्टर को आलोक का पूरा हुलिया बता दिया। फिर कहा – "मैं भी उसे तलाश करने आया हूँ। वह मेरे लडके का दोस्त है। क्या पता, उसे कुछ मालूम हो। मगर इतनी मेहरबानी कीजिए, उसके पिता जी के साथ अच्छा सुलूक कीजिए। वह भले आदमी हैं। शायद कुछ गलतफहमी हुई है। गोदाम उनका ज़रूर है, मगर पकड़ा गया माल किसी और व्यापारी का है। उन्होंने तो गोदाम किराए पर उठाया था। मैं अभी-अभी मालूम करके आया हूँ।"

"आप कहें, तो अभी उन्हें यहाँ बुलवाऊँ," इंस्पैक्टर ने कहा।

"नहीं, वह बेटे के लापता होने की खबर से और भी दुखी होंगे।" इतना कहकर शर्मा जी चले गए।

वह सीधे आलोक के स्कूल गए। उनका अनुमान सही निकला। आलोक अपने घर से एक सहपाठी के घर गया था। आदित्य के घर वह जान-बूझकर नहीं गया था। उसे पता था, आदित्य के पापा तुरंत उसके घरवालों को खबर कर देंगे।

शर्मा जी उस सहपाठी के साथ उसके घर गए। वहाँ एक कमरे में आलोक उदास बैठा था। शर्मा जी को देखकर रोने लगा। बोला – "अंकल, मुझसे गलती हो गई। मेरे पापा को जेल हो गई। अब क्या होगा अंकल? मेरी मम्मी बहुत दुखी होंगी। मै घर नही जाऊँगा अंकल।"

"बेटे, तुम गलत सोच रहे हो। तुम्हारी मम्मी तुम्हें याद कर रही हैं। तुमने कोई गलत काम नहीं किया। तुमने जो किया, वह बेमिसाल है बेटे !"

पास ही आदित्य खड़ा था। उसने मुस्कुराकर आलोक की ओर देखा – "आलोक, अब तो तुम्हें खुश होना चाहिए। तुम मुझसे बाज़ी मार ले गए।"

"वह कैसे?" पापा ने पूछा।

आदित्य ने पापा को सारी बात बता दी। कहा – "आलोक, अच्छा काम करके मुझसे बाज़ी मारना चाहता था।"

"अब समझा। अरे, बहादुरी का काम करके डर किसलिए रहे हो। उठो, पुलिस स्टेशन चलते हैं। वहाँ सब लोग तुम्हारा इंतज़ार कर रहे हैं।"

"मेरा इंतज़ार। वह किसलिए अंकल?"

"बेटे, इंस्पैक्टर तुम्हारी प्रशंसा कर रहे थे। वह तुम जैसे साहसी बच्चे से मिलना चाहते हैं। दूसरों को सुधार की बात बताना आसान है, मगर अपने घर से सुधार का काम शुरू करना कठिन है। तुमने छोटी सी उम्र में वही काम करके दिखा दिया है। उठो, देर हो रही है।"

आलोक और आदित्य के साथ उसके पापा पहले आलोक के घर गए। मम्मी ने आलोक को देखा, तो बॉहों में भर लिया।

आदित्य के पापा ने कहा – "अभी हमें पुलिस स्टेशन जाना है।" कहकर वह पुलिस स्टेशन की ओर चले गए।

थाने में गुप्ता जी इंस्पैक्टर के पास ही कुर्सी पर बैठे हुए थे। पास में दो-चार लोग और थे। दूर से शर्मा जी को आता देखा, तो इंस्पैक्टर ने कहा – "लो, शर्मा जी भी आ गए। मैं उन्हीं का इंतज़ार कर रहा था।" गुप्ता जी ने आदित्य के पापा से कहा – "आलोक कहाँ है? क्या वह मिला नही?"

"मिल गया। बाहर खड़ा है। वह आपसे डर रहा है। कह रहा है, पापा मुझे देखकर नाराज़ होंगे।"

"मैं नाराज़ हूँगा? किसलिए? मेरा बेटा तो लाखों में एक है। अब तक बाप ही बेटों को रास्ता दिखाता आया है, मगर आज बेटे ने अपना फर्ज़ निभाकर मेरी शान बढ़ा दी।"

"इनका सचमुच कोई अपराध नहीं। कागज़ देखकर सब पता चल गया। असली अपराधी हवालात पहुँच गया है। हमें गलती के लिए खेद है। मगर शर्मा जी, कहीं इस बात को अखबार में न छाप दीजिएगा !" कहता हुआ इंस्पैक्टर मुस्कुराने लगा।

"गलती आपकी नहीं, मेरी भी है। मैंने ऐसे गलत आदमी को गोदाम किराए पर दिया ही क्यों !"

तभी आदित्य और आलोक अंदर आ गए। "मेरे बेटे", कहते हुए गुप्ता जी ने बेटे को दौड़कर गले लगा लिया। इंस्पैक्टर ने भी आलोक की पीठ थपथपाते हुए कहा – "बहादुर बच्चा है !"

अभी वे लोग बात कर ही रहे थे, तभी नगर के कुछ सम्मानित व्यक्ति वहाँ आ पहुँचे। उनमें इस क्षेत्र के संसद सदस्य भी थे। उन्होंने कहा – "मैंने आलोक के बारे मे सब कुछ सुन लिया है। मैं चाहता हूँ, आज शहर में हाथी पर बैठाकर इस बच्चे का जुलूस निकाला जाए, ताकि शहर के बच्चों को इसके काम से प्रेरणा मिले।"

"आपने ठीक ही सोचा साहब। मैं भी यही सोच रहा था," इंस्पैक्टर ने टेलीफोन के नम्बर घुमाते हुए कहा।

कुछ ही देर में जुलूस का सारा प्रबंध हो गया। वह उठने लगे, तो गुप्ता जी संसद सदस्य से बोले—"आप नगेन्द्र शर्मा के बेटे आदित्य के बारे में भी जान लें।" फिर उन्होंने सारी घटना कह सुनाई।

सुनकर संसद सदस्य बोले – "भई, यह समाचार तो मैं अखबार में पढ़ चूका हूँ। वह इन्हीं का बच्चा है! बड़े भाग्यशाली हैं आप! कहाँ है वह बच्चा? मैं उससे मिलना चाहूँगा।"

"यही तो है!" गुप्ता जी ने कहा।

संसद सदस्य ने तुरंत आदित्य को गले लगा लिया। बोले – "इस शहर में भारत के दो चमकते सितारे मौजूद हैं और हमें पता भी नहीं! आज इन दोनों का साथ-साथ सम्मान करना चाहिए।"

शाम को शहर के बाजारों से गाजे-बाजे के साथ एक विशाल जुलूस निकला। आगे-आगे सजा-धजा एक हाथी जा रहा था। उस पर बैठे थे – आदित्य और आलोक। जुलूस जिधर से गुज़रता, उधर से ही जय-जयकार के नारे गूँजने लगते। इस तरह पूरे शहर का चक्कर काटता हुआ जुलूस एक पार्क में पहुँचा। शहर के निवासियों की ओर से उन दोनों का सम्मान किया गया। उन्हें बहुत-से उपहार भेंट किए गए। इन उपहारों में एक विशेष उपहार भी था – वह थी भारत माता की चाँदी मड़ी तस्वीर। उस पर लिखा था – 'बहादुर और ईमानदार बच्चे ही भारत का स्वर्णिम भविष्य हैं।'

दूसरे दिन आलोक और आदित्य मिले, तो आदित्य बोला – "अब बताओ, हममें किसने बाज़ी मारी।"

"तुमने ही मारी।"

"नहीं तुमने।"

पीछे से दोनों के पापा आ गए। आदित्य के पापा बोले – "मैं बताऊँ?"

"बताइए, अंकल।"

"जो पहले मुझे छू ले, उसी ने बाज़ी मारी।" दोनों भागे, मगर
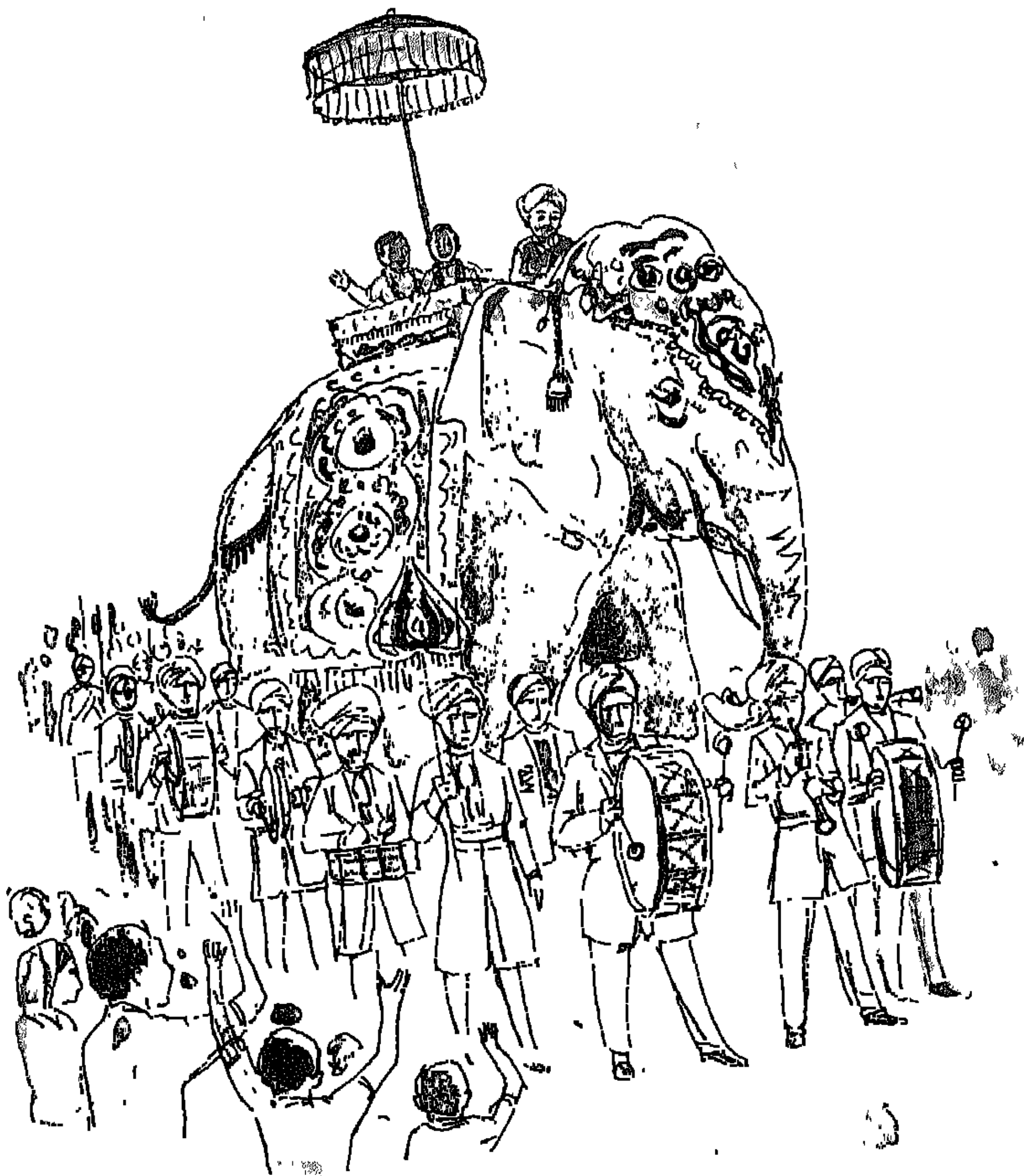
उन्हे कोई नहीं पकड़ सका। फिर शर्मा जी ने ही आकर उन दोनों को एक साथ बाँहों में भर लिया। कहा – "बाज़ी, तुमने नहीं, मैंने मारी।"

"हॉ ठीक ही तो है। आपने ही इन्हें इस योग्य बनाया है," गुप्ता जी ने हँसते हुए कहा।

इसके बाद वे दोनों खेलते-खेलते घर के अंदर चले गए। उनके जाने के बाद शर्मा जी बोले – "गुप्ता जी, देखा आपने हमारे आँगन के गुलाब कैसे महक रहे हैं?"

तभी पीछे से पादरी वहाँ आ गए। उनके हाथों में गुलाब के फूलों की दो मालाएँ थीं। आकर बोले – "मैं कल यहाँ नहीं था, वरना इन बच्चों को आशीर्वाद देने जरूर आता। अब मैं अपने हाथ से अपने बगीचे के फूलों की माला इन दोनों को पहनाकर अपना आशीर्वाद दूँगा। ये दोनों आपके ही आँगन के महकते गुलाब नहीं बल्कि इस देश की बगिया के महकते गुलाब हैं।" इतना कहकर पादरी ने दोनों को माला पहनाई और प्यार से चूम लिया। फिर दोनों को एक-एक गुलाब का फूल दिया।

गुलाब के फूलों की महक से सारा आँगन महक रहा था। आलोक और आदित्य कहीं खोए हुए थे। शर्मा जी ने पूछा – "अरे, क्या सोच रहे हो?"

आदित्य बोला – "पापा, आज उन्हीं दाढ़ी वाले जोशी दादा की याद आ रही है, जिनसे हमने कुछ करने का पाठ पढ़ा था। वह यहॉ होते तो कितना अच्छा होता !"

"हाँ, वास्तव में वही तुम्हारे गुरु हैं। वे यहाँ न सही, उनको मन ही मन प्रणाम कर उनका आशीर्वाद प्राप्त करो।"

यह सुनकर सभी के चेहरों पर एक गुलाबी मुस्कान खिल उठी। लगा, जैसे वहाँ चारों ओर गुलाब ही गुलाब महक उठे हों। ❑❑